Vol.8 February 2015 No.7
Annual Subscription : Rs 100
Rs. 10/- per copy

ब्रह्मार्पण

BRAHMARPAN

वेदोऽखिलो धर्ममूलम्

A Monthly publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

Brahmasha India Vedic Research Foundation
ब्रह्माशा इंडिया वैदिक रिसर्च फाउन्डेशन

ओ३म्–ध्वज है सबसे प्यारा

–प्रियवीर हेमाइना

ओ३म–ध्वज है सबसे प्यारा,
धन्य–धन्य ध्वज यही हमारा।
चक्रवर्ती था राज हमारा
ओ३म्–ध्वज था प्राण हमारा
वि ववविजय का गान हमारा
गूँजता था धरा पर न्यारा।
ओ३म्–ध्वज है सबसे प्यारा.....
आर्यों की पहचान कराता
उनके घर पर जब लहराता
उत्तम घर वह ही कहलाता
लहरे जिस पर यह ध्वज प्यारा।
ओ३म्–ध्वज है सबसे प्यारा.....
सात्त्विकता बरसाने वाला
प्रेम–सुधा सरसाने वाला
जन–जन को हर्षाने वाला
ुचिता का प्रतीक यह न्यारा।
ओ३म्–ध्वज है सबसे प्यारा....

साम–दाम में न यह झुकता
न दण्ड–भेद के समक्ष झुकता
सत्य–न्याय पर यह है ठुकता
विभु–विभा का यह है सितारा।
ओ३म्–ध्वज है सबसे प्यारा....
राम ने ली प्रेरणा इससे
कृष्ण ने ली धारणा इससे
पढ़ो इतिहास में इसके किस्से
किस–किस का यह रहा सहारा।
ओ३म्–ध्वज है सबसे प्यारा.....
आओ प्यारे जन–जन आओ
वैदिक िक्षा सब अपनाओ
एक साथ सब मिलकर गाओ
अजर–अमर ध्वज यही हमारा।
ओ३म्–ध्वज है सबसे प्यारा....

318, विपिन गार्डन, उत्तम नगर,
नई दिल्ली–110059
मो.:7503070674

ब्र. राजसिंह जी का आकस्मिक निधन

समस्त ब्रह्मार्पण परिवार ब्रह्मचारी राजसिंह जी आर्य के 5 जनवरी को आकस्मिक निधन पर हार्दिक ोक व्यक्त करता है। वे दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा के 12 वर्षों तक प्रधान रहे। वे वैदिक विद्वान, कर्मठ आर्य नेता और अन्तर्राष्ट्रीय आर्य महासम्मेलनों के कु ाल संयोजक थे। उनके निधन से आर्यजगत् की जो अपूरणीय क्षति हुई है उसकी पूर्ति संभव नहीं है।

संपादक

BRAHMASHA INDIA VEDIC RESEARCH FOUNDATION

C2A/58, Janakpuri,
New Delhi-110058
Tel :- 25525128, 9313749812
*email:*deeukhal@yahoo.co.uk
brahmasha@gmail.com
Website : www.thearyasamaj.org
of Delhi Arya Pratinidhi Sabha
Sh. B.D. Ukhul
Secretary
Dr. B.B. Vidyalankar
President
Col.(Dr.) Dalmir Singh (Retd.)
V.President
Dr. Mahendra Gupta *V.President*
Ms. Deepti Malhotra
Treasurer
Editorial Board
Dr. Bharat Bhushan Vidyalankar, Editor
Dr. Harish Chandra
Dr. Mahendra Gupta
Acharya Gyaneshwararya

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र दिल्ली ही होगा।

Printed & Published by
B.D. Ukhul for Brahmasha India Vedic Research Foundation
Under D.C.P.
License No. F2 (B-39) Press/ 2007
R.N.I. Reg. No. DELBIL/ 2007/22062
Price : Rs. 10.00 per copy
Annual Subscription : Rs. 100.00

Brahmarpan February 2015 Vol. 8 No.7
माघ–फाल्गुन 2070 वि.संवत्

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

A bilingual Publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

CONTENTS

1. ओ३म्–ध्वज है सबसे प्यारा 2
–प्रियवीर हेमाइना
2. संपादकीय 4
3. सांख्य द र्शन 8
–डॉ. भारत भूषण
4. प्रो. उमाकान्त उपाध्याय का महाप्रयाण : एक महती क्षति 9
–डॉ. भवानीलाल भारतीय
5. मूल ांकर द यानी एवं बोधरात्रि 10
6. महाराणाप्रताप और छत्रपति िवाजी
–मनुदेव अभय 15
7. महामना मदनमोहन मालवीय ने अपनी भूमिकाओं के द्वारा गहरी छाप छोड़ी 20
–राममोहन पाठक
9. "डॉ.अम्बेडकर एक सच्चे राष्ट्रभक्त व मानववादी थे" 23
–खु ाहाल चन्द्र आर्य
10. मुस्लिम और ईसाइयों की बढ़ती जनसंख्या चिन्तनीय 27
–जितेन्द्र बजाज
11. Bharat Ranta Madan Mohan Malaviya 33
-Ashok Malik
12. Bhrata Ratna Atal Bihari Bajpayee
-Swapan Das Gupta 34

संपादकीय

धर्मान्तरण, घरवापसी और ुद्धि

यदि हम भारतीय इतिहास पर नजर डालें तो महाभारत के युद्ध से पूर्व और ढाई हजार वर्ष बाद महात्मा बुद्ध और महावीर जैन के समय तक भारत में कोई धार्मिक मत-मतान्तर नहीं थे और यदि थे भी तो वे आर्य या अनार्य, सुर-असुर के रूप में थे। इसके बाद से बौद्ध और जैन मतों का प्रचलन हुआ। बौद्ध मत का उद्भव ब्राह्मणवाद की प्रतिक्रियास्वरूप हुआ जिसका खण्डन बाद में ांकराचार्य ने किया।

आज से 2015 वर्ष पूर्व ईसा के जन्म के कुछ समय प चात् ईसाइयत का प्रचार वि व के दे ाों में आरंभ हुआ और इसके कुछ समय प चात् हजरत मुहम्मद ने मध्य ए िाया में इस्लाम का बीजारोपण किया। भारत पर पहले ाकों और हूणों ने आक्रमण किए परन्तु उन्होंने यहीं रहकर कुछ समय जनता पर ाासन किया और यहाँ के लोगों में घुल-मिल गए। इसके बाद भारत पर अरब दे ाों से मुगलों के आक्रमण ुरू हुए। वे भी भारत के कुछ हिस्सों पर कुछ समय ाासन कर यहाँ की धन संपदा को लूटकर ले गए। महमूद गजनवी के बाद जितने भी मुगल आक्रमणकारी आए उन्होंने अपने ाासन के दौरान यहाँ के लोगों का तलवार के बल पर धर्मान्तरण किया और उन्हें इस्लाम और मत्यु में से एक को चुनने को कहा गया। उन्होंने हिन्दुओं को अपना गुलाम बना कर रखा। उस समय दे ा छोटे-छोटे जनपदों में बँटा हुआ था, और उनमें आपस में भेदभाव था। इसलिए विदे ाी आक्रान्ता यहाँ आकर लूटपाट कर जाते और दे ा के जनपद उनका मुकाबला नहीं कर पाते थे। मुगलों ने यहाँ आकर इस्लाम का प्रचार किया। उन्होंने हमारे धर्म, संस्कृति और प्राचीन ग्रन्थों का विना ा किया। मुगलों ने दे ा पर छः-सात सौ साल ाासन किया। सत्रहवीं ाताब्दी में विभिन्न यूरोपीय दे ाों के ासकों ने व्यापार के बहाने दे ा में व्यापारिक मंडियाँ स्थापित कीं और धीरे-धीरे व्यापार के विस्तार के साथ दे ा के विभिन्न प्रदे ाों पर आधिपत्य स्थापित कर दे ा को अपने अधीन कर लिया।

इन्होंने भी ाासन के साथ दे ा को गुलाम बनाने के लिए यहाँ के धर्म, संस्कृति, भाषा, और ज्ञान-विज्ञान को नष्ट कर अपनी भाषा, अपने धर्म और अपनी संस्कृति को दे ा पर आरोपित किया। मुगलों और अंग्रेजों ने दे ा के हिन्दुओं को धर्मान्तरित कर उन्हें मुसलमान और ईसाई बनाया। यह क्रम निरन्तर चलता रहा। इसी के कारण जब मुसलमानों की संख्या अधिक हो गई तो उन्होंने दे ा के विभाजन की माँग ारू कर दी। उन्होंने दे ा में धार्मिक उन्माद पैदा कर दंगे ारू कर दिए। अन्ततः अंग्रेजों ने दे ा का विभाजन कर दिया और पाकिस्तान अलग हो गया।

इस पष्ठभूमि से यह बात स्पष्ट हो जाती है दे ा के सभी भारतीयों के पूर्वज हिंदू थे। इसी बात को स्वीकार करते हुए पूर्व मुख्य न्यायाधी ा श्री मोहम्मद करीम छागला ने कहा था कि भारत का प्रत्येक नागरिक मूलतया हिन्दू है फिर चाहे वह ईसाई, मुसलमान या किसी भी सम्प्रदाय का हो। उनका यह भी कहना था कि हम सबके पूर्वज हिंदू थे। किसी ने भय से तो किसी ने प्रलोभन से तत्कालीन ाासकों का धर्म स्वीकार कर लिया। यही बात क मीर के पूर्व मुख्यमंत्री उमर अब्दुल्ला ने कही कि क मीर के 95 प्रति ात मुसलमान मूलतः हिंदू थे वे स्वयं गौढ़ ब्राह्मण परिवार से हैं। क मीर में संस्कृत काव्य ाास्त्र और साहित्य के 20 से अधिक काव्यकर्ता और साहित्यकार हुए हैं। इनमें कुछ प्रमुख नाम हैं-आनन्दवर्धन, अभिनव गुप्त, मम्मट, क्षेमेन्द्र, वामन, कुन्तक, भामह, भर्तमेण्ठ, राज ोखर, कल्हण, वेदभाष्यकार उव्वट आदि।"सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा" इस राष्ट्रगीत के रचयिता मुहम्मद इकबाल के दादा-परदादा क मीरी पंडित थे। उन्होंने लोभ-लालचव ा इस्लाम स्वीकार कर लिया। इसी प्रकार ध्रुपद गायक डागर बन्धु मूलतः मथुरा के पांडे थे। उनके पूर्वज गोपालदास पांडे थे। उन्हें किसी समारोह में उनकी गायकी पर मुग्ध होकर मुहम्मद ााह रंगीले ने पान का बीड़ा थमा दिया। जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार कर लिया। इस पर वहाँ के पंडितों ने उन्हें जाति बहिष्कृत कर दिया।

हिन्दुओं की धार्मिक कट्टरता-

हिन्दुओं की निरन्तर घटती हुई संख्या का कारण धार्मिक

कट्टरता भी है जिसका लाभ मुसलमानों और ईसाइयों को मिला। इसका एक उदाहरण डागर बन्धुओं को जाति बहिष्कृत करना है। ऐसा ही एक उदाहरण केरल में ईसाइयों के भारत में आगमन के बाद का है। उन्होंने हिन्दुओं की इस कट्टरता को भुनाने का तरीका ईजाद किया। वे रात को कुछ हिंदुओं की उपस्थिति में गाँव के कुएँ पर बैठकर भोजन करते और जाने-अनजाने कुएँ में बचे हुए खाने के अं ा गिरा देते। अगले दिन जो भी उस कुएँ से पानी पीता, उन्हें जाति से बहिष्कृत कर दिया जाता और इस तरह हिन्दुओं के गाँव के गाँव ईसाइयत में धर्मान्तरित हो जाते।

हिन्दुओं की जातिवादी व्यवस्था और समाज में सवर्ण वर्ग के प्रभुत्व के कारण अनुसूचित जाति के दलितों ने सामूहिक रूप से हिंदू धर्म का त्याग कर बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया। 14 अक्टूबर 1956 में डॉ. भीमराव अम्बेडकर के नेतत्व में 5 लाख दलितों ने हिन्दूधर्म छोड़कर बौद्धधर्म स्वीकार किया। इसी से प्रेरणा लेकर 5 नवम्बर 2001 को 50,000 दलितों ने हिन्दूधर्म की जातिव्यवस्था और सवर्ण लोगों के प्रभुत्व के विरुद्ध नारे लगाते हुए बौद्ध धर्म ग्रहण किया।

सन् 1981 में दक्षिण भारत के तमिलनाडु के मीनाक्षीपुरम कस्बे में 600 दलितों ने अपने से उच्च दलित (थेवर) परिवारों की ज्यादतियों से तंग आकर इस्लाम को स्वीकार कर लिया।

इन धर्मान्तरणों के लिए हिन्दू समाज भी कम दोषी नहीं है। यदि दूसरे धर्मों के लोग धर्मान्तरित होकर हिन्दूधर्म स्वीकार कर लेते हैं तो हम उन्हें अपने समाज में खपा-पचा नहीं पाते। जब रोटी-बेटी का प्र न आता है तो लोग पीछे हट जाते हैं। यदि हम उन्हें आत्मसात् करने को तैयार हों तो उन्हें हिन्दू धर्म में प्रत्यावर्तित किया जा सकता है।

आर्यसमाज का ाुद्धि आन्दोलन-11 फरवरी 1923 को श्रद्धानन्द जी ने ाुद्धिसभा की स्थापना की। स्वामी श्रद्धानन्द और महात्मा हंसराज ने दे ा में ाुद्धि आन्दोलन आरंभ किया। उन्होंने सन् 1921-22 में उत्तरप्रदे ा के आगरा क्षेत्र में ऐसे लाखों राजपूतों को जिन्हें औरंगजेब के ाासनकाल में बलपूर्वक मुसलमान बना लिया गया था हिन्दू धर्म में धर्मान्तरित किया था। इनका रहन-सहन, रीति-रिवाज अब भी हिन्दुओं जैसे ही थे।

गाँधी जी और कांग्रेसी ुद्धि आन्दोलन के खिलाफ थे। उनका कहना था कि ुद्धि आंदोलन हिन्दू-मुस्लिम एकता में बाधक है। उधर मुस्लिम मौलवी तबलीग (हिंदुओं को मुसलमान बनाने का) अंदालन जोर- ोर से चला रहे थे। वह कांग्रेसियों को हिंदू-मुस्लिम एकता में बाधक नहीं लगता था। गाँधीजी और कांग्रेस से इस मुद्दे पर मतभेद होने के कारण ही स्वामी श्रद्धानन्द ने कांग्रेस से संबंध तोड़ लिया था। उस समय ुद्धि के काम में यदि कांग्रेस ने अडंगा न लगाया होता तो हिन्दू-मुस्लिम समस्या प्रेम से हल हो जाती और दे ा का विभाजन भी न होता। उस समय अधिकां ा मुसलमान जो एक दो पीढ़ी पहले ही मुसलमान बने ये वे स्वेच्छा से हिन्दू बनने को तैयार थे, लेकिन वह समय हाथ से निकल गया। हिन्दुओं की संख्या में कमी की ओर स्वामी जी ध्यान 1912 ई. में कर्नल यू. मुखर्जी ने उस समय आकर्षित किया जब वे कोलकाता गए थे। उन्होंने स्वामी जी को बताया कि यदि हिन्दुओं की संख्या इसी रफ्तार से कम होती गई तो अगले 420 वर्षों में हिन्दू जाति का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा।
इसके बाद स्वामी जी ने ुद्धि का काम जोर- ोर से आरंभ कर दिया और 30-31 मई 1923 को मलकाने राजपूतों की ुद्धि की। इसके बाद उत्तरप्रदे ा में जगह-जगह ुद्धि सम्मेलन होने लगे और गाँव के गाँव ुद्ध होकर आर्य (हिन्दू) बनने लगे। इस प्रयास में साठ हजार मलकाने मुसलमान हिन्दू बन गए। इस दौरान आर्य नेताओं को हत्या की धमकियाँ मिलने लगीं परंतु उन्होंने इसकी परवाह नहीं की। इसी क्रम में स्वामी जी ने असगरी बेग़म की ुद्धि करके उसे ाान्ति देवी नाम दिया। इसी ुद्धि से भड़क कर 23 दिसम्बर 1926 को एक मतान्ध मुस्लिम अब्दुल र ाीद नामक युवक ने रोग ाय्या पर पड़े स्वामी श्रद्धानन्द जी को गोली मारकर ाहीद कर दिया। उसके बाद से यह आंदोलन धीमा पड़ गया।
आज हिन्दू समाज और आर्य समाज का यह कर्तव्य है कि वे स्वामीजी द्वारा छोड़े गए ुद्धि कार्यक्रम का पुनःप्रवर्तन करें और हिन्दू समाज से बिछुड़े धर्मान्तरित भाइयों की घरवापसी करें। साथ ही हमारा यह भी कर्तव्य है कि हम जातिवाद दलितों से भेदभाव को समाप्त कर हिन्दुओं को संगठित करें।

संपादक

सांख्य द र्शन (अध्याय-1, सूत्र-85)

-डॉ. भारत भूषण विद्यालंकार

न, अभिव्यक्ति निबन्धनौव्यवहाराव्यवहारौ।।85।।

अर्थ-(न) नहीं (व्यवहाराव्यवहारौ) व्यवहार या अव्यवहार (अभिव्यक्ति निबन्धनौ) अभिव्यक्ति के कारण से।

भावार्थ-सूत्रकार कहते हैं कि पिछले सूत्र में जो आ ांका व्यक्त की गई थी, वह ठीक नहीं है क्योंकि किसी भी कार्य की उत्पत्ति या अस्तित्व का व्यवहार या अव्यवहार उस कार्य की अभिव्यक्ति पर आश्रित होता है। यद्यपि कारणरूप में कार्य विद्यमान होता है परन्तु कार्य के बारे में सभी व्यवहार उसी समय संपन्न होते हैं जब कार्य अभिव्यक्त हो जाता है। यदि ऐसा न हो और कारण की अवस्था में सारे व्यवहार संपन्न हो जाएँ, तो प्रलय की अवस्था में ही सारे जगत का व्यापार होता रहना चाहिए। यदि यह कहा जाए कि उस समय कार्य की सत्ता ही नहीं थी तो व्यवहार कैसे हो जाएगा? ठीक है, परन्तु कार्य की अविद्यमानता का मतलब यदि यही है कि कार्य अभी अपनी अभिव्यक्त अवस्था में नहीं है, तो कोई आपत्ति नहीं। यदि असत्ता या अविद्यामानता का मतलब पूर्णरूप से कार्य का अभाव हो तो वह कभी सद्भाव (सत्ता) की अवस्था में नहीं आ सकती। तब तो सारे व्यवहार का पूर्णतया लोप हो जाएगा। इससे स्पष्ट है कि व्यवहार की अवस्था केवल कार्य की अभिव्यक्ति की अवस्था में होती है और उसी के लिए कारण सामग्री का संग्रह तथा प्रयत्न अपेक्षित होता है।

सी-2ए, 16/90 जनकपुरी,
नई दिल्ली-10058

• ारीर को रोगी निर्बल रखने के सामान दूसरा कोई पाप नहीं है।

• स्वतंत्रता हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है।

-लोकमान्य तिलक

• अन्याय और अत्याचार करने वाला, उतना दोषी नहीं माना जा सकता, जितना कि उसे सहन करने वाला।

-बालगंगाधर तिलक

प्रो. उमाकान्त उपाध्याय का महाप्रयाण : एक महती क्षति

–डॉ. भवानीलाल भारतीय

हाल ही में कोलकाता से श्री प्रो. उमाकान्त जी उपाध्याय के निधन का दुःखद समाचार मिला। उपाध्याय जी से मेरा आधी सदी से अधिक सम्पर्क और स्नेह सम्बन्ध रहा। वे उत्तरप्रदे ा के सुलतानपुर जिले के एक संस्कारी ब्राह्मण परिवार में जन्मे थे। वैदिक कर्मकाण्ड के प्रति उनका पारिवारिक आकर्षण रहा। आगे चलकर कोलकाता आर्य समाज के वार्षिक अधिवे ानों पर उन्होंने कई द ाकों तक आचार्यत्व का दायित्वपूर्ण कार्य संभाला और अपने ही मार्गद र्ान में पं. आत्मानन्द, पं. नचिकेता आदि कई नवीन कर्मकाण्डी पण्डितों को प्र ाक्षित किया। यों वे अर्थ ाास्त्र के प्राध्यापक थे। किन्तु वेद, संस्कृत तथा ाास्त्रों में उनकी गहरी गति थी। उन्होंने वेद मंत्रों के जैसे लोकोपयोगी अर्थ किये हैं, उनसे वैदिक स्वाध्याय में लोगों की रुचि बढ़ी है। अथर्ववेद के पथ्वी सूक्त का भाष्य इसी कोटि की रचना है। वेदाध्यन में प्रवत्त होने के अलावा उन्होंने बंगाल आर्य समाज की गतिविधियों और विकास को लक्ष्य बना कर कोलकाता आर्य समाज का इतिहास, आर्य समाज के विद्वान् और ाास्त्रार्थ आदि अनेक ोधपरक ग्रन्थ लिखे हैं। सत्यार्थप्रका ा दर्पण, सत्यार्थप्रका ा का को ा ही है।

उपाध्याय जी बहुभाषाविज्ञ थे। हिन्दी, अंग्रेजी, संस्कृत और बंगला में उनकी निर्बाध गति थी। उन्होंने अनेक बंगाली ग्रन्थ भी लिखे हैं। निरन्तर आधी ाताब्दी तक कलकत्ता आर्य समाज के मासिक पत्र **'आर्यसंसार'** का सम्पादन कर उन्होंने आर्य पत्रकार जगत् में एक मानदण्ड स्थापित किया। जीवन के साथ उपाध्याय जी ने वाणी द्वारा भी वैदिक धर्म का भूमण्डल स्तर पर प्रचार किया था। मेरे उनके निजी सम्बन्ध थे। यदा–कदा सम्मेलन–समारोहों तथा कलकत्ता के कार्यक्रमों में उनमें भेंट तथा विचार परिवर्तन के अवसर आते थे। मेरा अमत महोत्सव जब गंगानगर में आयोजित किया गया तो उपाध्याय जी को अध्यक्षता के लिए आमंत्रित किया गया जिसे उन्होंने प्रेमपूर्वक स्वीकार किया। यों कोलकाता तथा श्रीगंगानगर की भौगोलिक दूरी कम नहीं है और यह यात्रा काफी कष्टप्रद होती है। एक सात्विक, समर्पित तथा सु ाक्षित विद्वान् का आर्य बौद्धिक जगत् से विदाई लेना एक महती तथा अपूरणीय क्षति है। वे मुझसे बड़े और स्वर्ग का रास्ता भी उन्होंने पहले ही अन्वेषित किया। आगे की पंक्ति में अब हमारा नाम है। उपाध्याय जी का सारा परिवार आर्य समाजी है। बड़े भाई रमाकान्त, अनुज श्रीकान्त उपाध्याय तथा भतीजे डॉ. वाचस्पति उपाध्याय उनके परिवार के रत्न हैं।

315, ंकर कालोनी, श्रीगंगानगर (राज.)

मूल ंकर द ामी एवं बोधरात्रि

वेदोद्धारक, मनुष्य जाति के सुधारक, मात ाक्ति की पूजा सत्कार, अधिकार दिलाने वाले आर्य समाज के संस्थापक, वैदिक संस्कृति और गौ माता रक्षक वैदिक सुपथ के मार्गद ंक, राष्ट्रनायक, चारों वेदों की भूमिका लिखने वाले, अमर ग्रंथ सत्यार्थप्रका ा इत्यादि ग्रंथों के मनुष्य जाति के कल्याणार्थ प्रदान करने वाले, राष्ट्र पितामह, वि व वन्दनीय महान तेजस्वी, सच्चरित्र वेदों एवं प्राचीन आचार्यों के ग्रंथों के अद्वितीय व्याख्याता, प्राचीन सभ्यता-संस्कृति के पोषक स्वनाम धन्य महर्षि दयानन्द का जन्म मछुकाँटा नदी के किनारे मोरवी राज्य के टंकारा कस्बे में ब्राह्मण कुल में सम्वत् 1881 में हुआ था। ये उदीच्य ब्राह्मण थे। उनके पिता की पुष्कल भूमिहारी थी। उनको मोरवी राज्य में अधिकार भी प्राप्त थे। वे अच्छे सत्ताधारी थे और प्रबन्ध के लिए कुछ सैनिक भी रखते थे। अमर ाहीद श्री पं. लेखराम जी ने लिखा महाराज का जन्म स्थान काठियावाड़ में मौरवी नगर है। उनके पिता का नाम कर्षन जी था। कर्षन जी बड़े भूमिहार थे और लेनदेन का भी काम करते थे। कर्षन जी के ज्येष्ठ पुत्र स्वामी दयानन्द का नाम मूल जी था। मूल जी को लोग दयाल जी भी कहते थे। श्री स्वामी दयानन्द जी का जन्म एक परिवर्तन के युग में हुआ। उस समय भारत में बड़ा भारी विप्लव हो रहा था। मुगल राज्य का मंगल ग्राह म्लानमुख हो चुका था। राष्ट्रीय ाक्ति किसी सुदढ़ नीति सूत्र में आबद्ध न थी। उन दिनों महाराष्ट्र का महाबल नीति-निपुण अंग्रेजों के दल-बल से टक्कर ले रहा था। पे ोवर और सिन्धिया ाक्ति का तारा अस्ताचल की ओर जा रहा था। ईस्ट इण्डिया कम्पनी ाासन के प्रतिनिधि लार्ड एम्हर्स्ट, भारत के कई भागों के भाग्य की बागडोर अपने हाथों में लेकर ाासन कर रहे थे। पंजाब केसरी श्री रणजीत सिंह जी अपने सिंहनाद से ातद्रु से लेकर सिन्धु महानद के तटों तक सारे पंजाब प्रान्त को प्रतिध्वनित कर रहे थे। उस समय दे ा में अ ाान्ति के चिह्न जहाँ-तहाँ दिखाई दे रहे थे। इसलिए दे ावासी विदे ाी लुटेरों के अत्याचार से पीड़ित थे। उस समय सामाजिक द ाा भी अत्यन्त ाोचनीय थी। भारत भूमि अनेक कुरीतियों से

ग्रस्त हो गई थी। ईसाइयों के पादरी आर्यावर्त को ईसाई बनाने के लिए सर्वथा सुसज्जित होकर आ रहे थे। आर्य जाति के करोड़ों मनुष्य धर्मग्रन्थों को पढ़ना तो कहाँ उनके सुनने के भी अधिकारी नहीं समझे जाते थे। कुसंस्कारों का इतना प्राबल्य था कि विदे ा गमन, समुद्र यात्रा और विदे ाी के स्प ा से लोग जाति पतित किये जाते थे। सब जगह भारत में अविद्या अंधकार का राज्य था। आर्य जाति की रीति-नीति का आका ा पा चमी सभ्यता की घनघोर घटाओं से क्रान्त हुआ जाता था। इस अवस्था में एक सम्मानित समद्ध गह को (स्वामी दयानन्द) मूल ांकर के प्रका ा ने प्रकाा ित किया। सम्पूर्ण परिवार में आनन्द मनाया जाने लगा। धीरे-धीरे माता-पिता की देखरेख, लालन-पालन से वह बालक बड़ा हुआ। बालक बहुत ही मेधावी प्रखर बुद्धि था। मूल ांकर (दयानन्द जी) की माता प्यारे पुत्र को भूख-प्यास से पीड़ित देखना नहीं चाहती थी। माता ने उसके पिता से कहा यह सुकोमल बालक कष्टदायक व्रतोपवासों के योग्य नहीं है। इससे भूख नहीं सही जाती। स्वामी दयानन्द के पिता बड़ी धारणा के धनी थे। जब श्री दयानन्द 1894 में चौदह वर्ष की आयु को प्राप्त हुए तो उस समय यजुर्वेद संहिता उनको कण्ठस्थ हो गई थी। अन्य वेदों का भी उन्होंने कुछ-कुछ अभ्यास कर लिया था। व्याकरण के भी ाब्द रूपावली आदि छोटे-छोटे ग्रंथ पिताजी से पढ़ लिये थे। इसी वर्ष (स्वामी जी) मूल ांकर के पिता ने उनको ि ावरात्रि का व्रत रखने की आज्ञा की। दूसरे प्रदे ाों की रीति से भिन्न काठियावाड़ में फाल्गुन के स्थान पर यह व्रत माघ वदी 14 को होता है। उस दिन सायं समय ही मूल ांकर को समझाया गया कि आज रात-भर तुम्हें जागरण करना होगा। पिता ैवमत को मानते थे। पिता ने कहा ऐसा न करोगे तो व्रत निष्फल हो जायेगा। पूजन प्रकार भी पिता ने मूल ांकर को बता दिया। इस रात्रि को नगर से बाहर एक ि ावालय में नगर के भक्त और प्रतिष्ठित जन जाकर व्रतपूर्वक पूजा-पाठ, जप, जागरण किया करते थे। ैव भक्तों की मण्डलियाँ एक-एक करके सायं समय मन्दिर में प्रवे ा करने लगीं। लोगों ने प्रथम प्रहर की पूजा बड़े भक्ति-भाव के

साथ समर्पित की। दूसरे पहरे के प्रारम्भ होने पर लोगों की आँखें मिचने लगीं। निद्रा देवी की माया ने सभी को मूर्च्छित करके जहाँ-तहाँ सुला दिया। सबसे प्रथम जिसे निद्रा आई तो वे थे मूल ांकर के पिता। पुजारी लोगों ने देखा जब सारे भक्त सो गये हैं और आनन्द से खर्राटे ले रहे हैं तो वे भी धीरे-धीरे मन्दिर के बाहरी भाग में जाकर निद्रा लाभ करने लगे। ऐसे गम्भीर, निस्तब्ध, नीरव, सुनसान समय में उस ोभन ािवालय की पूजोपहार सहित ािवपिण्डी को दो ही ज्योतियाँ प्रकाि ात कर रही थीं- एक तो मन्दिर की ज्वलन्त बत्ती और दूसरे मूल ांकर की उज्ज्वल चित्त वत्ति। दीपक की बत्ती तो ज्ञान- ून्य थी। परन्तु मूल ांकर बालक की चमत्कारिणी चित्तवत्ति ज्ञानवती और ग्रहण ाक्ति सम्पन्न थी। जब मूल ांकर पर निद्रा का आक्रमण होता और उनकी आँखें झिपने लगतीं तो वे नेत्रों पर ठण्डे पानी के छींटे दे-देकर अपने आपको सावधान और सचेत करते। उन्हें भय था कि आँखें लग जाने से ही व्रत निष्फल न हो जाये। पर उस बालक मूल ांकर का चित्त आ चर्य से चकित हो गया, जब उसने देखा कि ािवपिण्डी पर अपवित्र क्षुद्र जन्तु चूहे कूद-कूद कर और उछल-उछल कर चढ़ते हैं और उस पर चढ़ाया हुआ भक्तों का पूजोपहार बड़े आनन्द से खा रहे हैं। जिस प्रकार मेघमाला में रह कर विद्युत की रेखा चमक जाती है और जिस प्रकार वायु से ताड़ित महासागर में ऊँची-ऊँची तरंगें उठती हैं वैसे ही मूल ांकर बालक के चिदाका ा में इस घटना में संचालित विचार और प्र न एक-एक करके चमचमा उठे। ांका समाकुल हृदय में मूल ांकर ने सोचा कि 'ाि व कथा में तो मैंने सुना है कि ाि व त्रि ूलधारी हैं, उनका वाहन वषभ और निवास कैला ा है, वह मनुष्याकारधारी देवता, डमरू बजाने वाला अस्त्र सम्पन्न और वर ाप प्रदान में समर्थ परब्रह्म है? वह पा ुपतास्त्र से दैत्यों का संहार करता है तो क्या वही महादेव यह मूर्ति हो सकती है? अहो! इसके सिर पर तो ये अपावन प्राणी चूहे दौड़ लगा रहे हैं, इसके चढ़ावे को बड़ी निर्भयता से खा रहे हैं। इसमें तो इन तुच्छ जीवों को भगाने

का भी बल नहीं? यह महादेव कैसा? ऐसी ंका एवं प्र न मूल ंकर बालक के चित्त में िवरात्रि के दिन उत्पन्न हुए, जिसको देख के बालक आ चर्यचकित हो गया। मूल ंकर जी ने अपने पिता को जगाकर बिना झिझक अपनी ंकाओं को उनके सम्मुख उपस्थित कर दिया और विनय की कि जिस देव का वर्णन मुझे सुनाया गया है, क्या उसके समान ही यह मन्दिर की मूर्ति है या चूहों से अवहेलना प्राप्त यह कोई दूसरी वस्तु है? पिता ने पुत्र के इन प्र नों को सुनकर क्रोध से आँखें लाल कर लीं और भर्त्सनापूर्वक कहा- यह बात तू क्यों पूछता है? ऐसे िवाराधन के समय ऐसा प्र न क्यों करता है? पर जिस महात्मा को स्व-आत्मा ही में सत्य सम्प्राप्ति हो गई थी, जो साधारण घटना से असाधारण प्रबोध का धनी हो चुका था, जिसको बोलने के लिए आत्मा प्रेरणा दे रही थी वह डाँट-डपट से बन्द न हुआ। मूल ंकर निर्भीक भाव से बोले पिता जी जिस महादेव की कथा मुझे सुनाई गई है, वह तो गुणों से चेतन प्रतीत होता है। यदि यह मूर्ति वही महादेव है तो भला इन भ्रष्ट महामलिन मूषकों को अपने ऊपर क्यों चढ़ने देता है। चूहे उसके सिर पर सपाटे मारते-फिरते हैं और यह सिर तक नहीं हिलाता और न इन घणित जन्तुओं के स्प र्ा से ही अपने को बचाता है। इस अचेतन महादेव से मैं उस सर्व ाक्तिसम्पन्न चेतन परमे वर को समझना असम्भव समझता हूँ, यही भेद जानने के लिए आपको जगाकर प्र न पूछ रहा हूँ। पुत्र के इन अश्रुतपूर्व प्र नों को सुन पिता ने गम्भीरता से समझाना आरम्भ किया। पुत्र! इस कलिकाल में महादेव के द र्ान नहीं होते। बेटा! तेरी तर्क बुद्धि बहुत बड़ी है, यह सत्य है कि यह तो केवल देवता की मूर्ति है, साक्षात् देवता नहीं। पित उपदे ा से मूल ंकर की सन्तुष्टि नहीं हुई। उनकी मूर्तिपूजा से आस्था उठ गई। उसी समय से दढ़ संकल्प कर लिया कि जब चेतन सत्ताधारी िव के प्रत्यक्ष द र्ान कर लूँगा तभी उसका पूजन करूँगा। इन जड़ प्रतिमाओं को कभी भी नहीं पूजूँगा। यह बालक मूल ंकर ने हृदय से नि चय कर लिया। बाल्य काल से ही श्री दयानन्द जी की

यह प्रकृति थी कि वे सहसा किसी बात को ग्रहण नहीं करते थे। पर वह विचारपूर्वक किसी बात को ग्रहण कर लेते तो ऐसे दढ़ हो जाते थे कि उसके पालन में चाहे कैसा भी कष्ट हो, उसे नहीं छोड़ते थे। असत्य, भ्रमयुक्त बात को तणवत् परित्याग कर देते थे। आगे पिता ने पुत्र की बुद्धि का चमत्कार अभी ही देखा था, इस कारण अनुमति देते हुए यही कहना उचित समझा कि अच्छा घर जाते हो तो अकेले मत जाओ। सिपाही को साथ लेते जाओ, परन्तु भोजन कदापि न करना। मूल ांकर को भूख लगी थी, घर जाके माता से कहा–माताजी, मुझे बड़ी भूख लग रही है। माता ने कहा 'बेटा मैं तो तुझे पहले ही कहती थी कि तू उपवास न कर सकेगा, परन्तु तूने बड़ा हठ किया। तेरे पिता बडे पक्के ौव भक्त हैं। यदि उनको उपवास तोड़ने का पता चला तो वह तुझे ताड़ना करेंगे। बालक ने भोजनादि कर लिया। आगे अब पूजा पाठ से खुली छुट्टी मिल गयी।

मूल ांकर ने विद्याध्ययन में बहुत उन्नति की। निघण्टु निरुक्त और मीमांसादि ाास्त्र पढ़ना आरम्भ कर दिया। समीपवर्ती एक विद्वान ब्राह्मण से पढ़ाई आरम्भ की थी। दो छोटी बहिनें, और दो छोटे भाई, ये सब मिलकर मूल ांकर जी पाँच बहिन–भाई थे। सब बहिन भाई परस्पर सुदढ़ स्नेह सूत्र से सम्बन्ध थे। छोटी अवस्था में बहिन की और प्यारे चाचाजी की मत्यु हो गयी। विचार आया, मन में प्र न उठे, नि चय मुझे भी उसी मार्ग का अनुसरण करना पड़ेगा। मत्यु ऐसी अव यम्भावी है उससे छोटा बड़ा कोई भी बच नहीं सकता। हाँ, यह असह्य वियोग वेदना सबको सहनी होगी। यह दुर्दिन जीवमात्र को देखना होगा। सचमुच यह जीवन क्षण–भंगुर है, अस्थिर है। तब तो जन्म–मरण के दारुण दुःख से मुक्ति लाभ करना है जिससे अमर पथ जीवन की उपलब्धि हो। **'असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मत्योर्मा अमतं गमयेति'**। नि चय कर प्रभु से प्रार्थना की। सच्चे ि ाव को, मत्यु के अमर पथ को मूल ांकर ने प्राप्त कर लिया तथा संसार को वेद का सन्दे ा देकर स्वस्ति पथ द ार्ा दिया।

महाराणा प्रताप और छत्रपति ि ावाजी

–मनुदेव अभय

भारत का अर्वाचीन मध्य युग का इतिहास–खंड अनेक विवादों से भरा हुआ है। यह काल–खण्ड विदे ाी लुटेरे, आतंकवादी तथा हिंसक मोहम्मद गौरी, से लेकर मुस्लिम प्र ाासन के अंतिम काल–खण्ड बहादुर ााह जफ़र तक माना जाता है। 750 वर्ष की इस लम्बी अवधि में अकबर (जलालुद्दीन) ही एक ऐसा बाद ााह था, जिसने अपने, परायों तथा स्वयं को धोखे में रखकर इस दे ा को बहुत क्षति पहुँचाई। इसी प्रकार छत्रपति ि ावाजी ने औरंगजेब सरीखे धूर्त, अफजल खाँ की तरह वि वासघाती के अपने गुरु समर्थ रामदास की प्रेरणा से छक्के छुड़ा दिये। भारतीय इतिहास के महाराणा प्रताप और छत्रपति ि ावाजी ऐसे नक्षत्र है जो सदैव ही अपने तेजस्वी रूप में चमकते रहेंगे।

भारत के इस आर्वाचीन–काल को विदे ाी आक्रमणकारियों का काल कहना अधिक उचित होगा। विदे ाी आक्रमणकारियों से संघर्ष के काल में महाराणा प्रताप और ि ावाजी ऐसे वीर योद्धा थे जिन्होंने राष्ट्र के गौरव तथा स्वाभिमान को पुनः प्रतिष्ठित कर दे ा, धर्म और संस्कृति की रक्षा की। दोनों महापुरुष संयोग से सूर्यवं ाी सिसोदिया कुल के थे। यदि महाराणा प्रताप प्रारम्भ थे तो छत्रपति ि ावाजी उस प्रक्रिया के अन्त। स्वाधीनता का जो महायज्ञ महाराणा प्रताप ने ाुरू किया, उसमें पूर्णाहुति ि ावाजी ने दी। दोनों के व्यक्तित्व और कर्तव्य में अद्भुत साम्य दिखाई देता है। सम्प्रति, इस स्वतंत्र राष्ट्र में महाराणा प्रताप और वीर छत्रपति ि ावाजी अधिकाधि ाक प्रासंगिक हैं। नई पीढ़ी को इनसे सतत प्रेरणा लेने की आव यकता है।

ि ावाजी की कर्मस्थली सह्याद्रि की पर्वत–मालाएँ थीं। उसी प्रकार प्रताप की कर्मस्थली अरावली की पर्वत– ंखलाएँ थीं। दोनों ही महापुरुषों ने इन पहाड़ियों का सुरक्षा व आक्रमण के लिए प्रभावी उपयोग किया। ि ावाजी तो जन्म से ही अपने पिता से दूर रहे, प्रताप को भी कि ाोर होते ही महाराणा

उदयसिंह ने चित्तौड़ की तलहटी के गाँवों में रहने के लिए भेज दिया। अपने पूर्वज मर्यादा पुरुषोत्तम राम की तरह वनवासियों को वे राष्ट्र की मुख्य धारा में ले आये। राम ने वनों में रहने वाली वानर, ऋक्ष आदि को संगठित कर एक ऐसी ाक्ति का निर्माण किया, जो आसुरी ताकतों को पराजित करने में सफल हो सकीं। ठीक, उसी प्रकार प्रताप ने भीलों तथा वनवासियों को और ि ावाजी ने मावलों को स्वातंत्र्य-योद्धा बना दिया। धूर्त और विदे ी ईसाई मि ानरी, इनकी अ ि ाक्षा, अज्ञानता, निर्धनता का अनुचित लाभ उठाकर ि ाक्षा, चिकित्सा, कृषि के नाम पर लालच-प्रलोभन देकर इनके मतान्तरण में लगे रहे। यदि इन धूर्त ईसाई मि ानरियों को दे ा-निकाला नहीं दिया गया, तो हमारी अव ि ाष्ट राष्ट्रीय अखण्डता तथा सम्प्रभुता खतरे में पड़ सकती है। इन दोनों महापुरुषों ने वनवासी, गिरिवासी तथा ग्रामीणों को संगठित करने में विलक्षण कु ालता का परिचय दिया।

जहाँ तक साधनों का प्र न है, ि ावाजी के पास तो पूनाकी छोटी-सी जागीर थी तथा प्रताप के मेवाड़ में भी उनके राज्यारोहण के समय सिर्फ 6300 वर्ग मील का क्षेत्र था। दूसरी ओर अपनी धन-सम्पदा और साधनों से सम्पन्न अकबर था। अर्थात् चारों ओर मुगल साम्राज्य और बीच में छोटा-सा मेवाड़। ि ावाजी को तो कई दु मनों से एक साथ टक्कर लेनी पड़ी। औरंगजेब, बीजापुर की आदिल ााही, निजाम ााही, कुतुब ााही आदि सभी उनके विना ा के लिए कमर कसे हुए थे।

इन दोनों महापुरुषों ने अनेक तेजस्वी लोगों का निर्माण किया। तानाजी मालसुर, बाजीपुर दे ापाण्डे, मुरारबाजी, फिरांगोजी नरसाला, हम्बीरराव मोहिते, आनन्दराव आदि अपनी ध्येयनिष्ठा, पराक्रम और सर्वस्व-समर्पण भाव के कारण अमर हो गये। जिन हिन्दुओं को मुसलमानों ने मुसलमान बना लिया था, वीर ि ावाजी ने सामाजिक समरसता बनाये रखने के लिए उन्हें पुनः हिन्दू धर्म में सम्मिलित कर मुल्ला-मौलवियों को चुनौती दे दी। इसी तरह झाला मानसिंह, राम ााह तंवर राठौर, रामदास,

कृष्ण जी चूडावत, भाण सेनगरा भी अमर हो गये। कहते हैं, ि ावाजी के मावले वीर कई-कई घंटों तक घोडों की पीठ पर बैठे-बैठे ही भोजन करते थे। प्रताप के सैनिकों की वि ोषताओं के लिए डॉ. देवीलाल पालीवाल ने बिल्कुल ठीक लिखा है- "उनका साधारण भोजन प्रायः वे कपड़े में लपेटकर कमर पर बाँधकर रखते थे, जिससे तेजी से एक स्थान से दूसरे स्थान के लिए प्रस्थान करने में सरलता रहती थी।" यह था महाराणा प्रताप के सैनिकों का त्याग-वे भोजन के लिए नहीं अपितु मात्र जीवित रहने के लिए भोजनकर युद्ध में पुनः रत हो जाते थे।

दोनों महापुरुष अजेय योद्धा तथा अद्वितीय सेनापति थे। सीमित साधनों तथा अल्प सैन्य-बल से युद्धों में जैसी सफलताएँ प्रताप और ि ावाजी ने प्राप्त कीं वैसे उदाहरण अन्यत्र नहीं मिलते। कोई सीजर इन वीरों के सामने नहीं ठहरता। जो आद र्ावाद इन दोनों महावीरों ने अपनी सेना में उत्पन्न किया, वैसे भाव प ि चमी जगत् के सेनानायक कभी उत्पन्न नहीं कर सके। प्रताप और ि ावाजी दोनों वास्तविक अर्थों में जननायक थे। जन-जन की अगाध श्रद्धा इन्हें मिली। आज भी ये दोनों महापुरुष हम सभी भारतीयों के प्रेरणादायी हैं। दोनों ही जन-नायकों ने छापामार युद्ध-प्रणाली को अपनी युद्ध-नीति का आधार बनाया। राजनीति के क्षेत्र में दोनों श्री कृष्ण के अनुयायी थे। ि ावाजी तो कूटनीति के महारथी थे। यहाँ तक कि ात्रुओं में भ्रम पैदा करना, उनमें ही संघर्ष करा देना, ात्रुओं की गुप्त योजनाओं का पता कर लेना, उनके बाएँ हाथ का खेल था। इस संदर्भ में, प्रताप ने तो अनेकों बार कूटनीति का खेल खेला। एक ओर अकबर को संधिवार्ता में उलझा दिया तो दूसरी ओर अकबर का साथ देने वाले हिन्दू राजाओं को अपनी ओर करने में उन्होंने बुद्धि-चातुर्यका प्रयोग किया। यद्यपि धूर्त अकबर ने प्रताप के संगठन को छिन्न-भिन्न करने का बहुतेरा प्रयास किया, परंतु उसे निरा ाा ही हाथ लगी। इसका एक ही उदहारण पर्याप्त होगा कि जब अकबर

ने मेवाड़ के राव चन्द्रसेन को मुगलों के विरुद्ध खड़ा कर दिया। प्रताप की कूटनीति के कारण ही मानसिंह तथा उसके सहयोगी मन ही मन मेवाड़ के समर्थक हो गये। यही कारण था कि अकबर ने मानसिंह को जहर देकर मरवाने की कोि ा की। (देखिए–कर्नल टॉड–उदयपुर राज्य का इतिहास खंड द्वितीय, अध्याय 11, पष्ठ 361)। प्रताप की कूटनीति से भयाक्रान्त होकर अकबर कई बार नींद में चौंक कर उठ बैठता था।

उल्लेखनीय है कि उन दिनों समाज में दिल्ली का बाद ाह अकबर ही संसार का मालिक है" यह भय व्याप्त हो गया था। प्रताप ने इस सामाजिक मनोद ा को बदल कर राष्ट्र के जीवन में पुनः साहस व उत्साह उत्पन्न किया। यही हीनता की भावना ि ावाजी के काल में भी जनमानस में गहराई से बैठ गई थी। वीर छत्रपति ि ावाजी ने न केवल इस हता ा को दूर किया बल्कि 'हिन्दू–पद–पाद ाही' को स्थापित कर मुगलों की सत्ता को ही जर्जर कर दिया। यही कारण है कि इन दोनों वीरों का मनोवि लेषण करते हुए डॉ. त्यागी ने क्या खूब लिखा है– "ऐसे अलौकिक कार्य करने वाले प्रताप और ि ावाजी मन से वैरागी थे। अहा! प्रताप तो स्वयं को एकलिंगनाथ (महादेव) का 'दीवान' भर मानते थे। छत्रपति वीर ि ावाजी ने भी राज्य को कभी अपना नहीं माना। ई वरीय कार्य समझकर ही उन्होंने 'स्वराज्य' के एक सेवक की तरह ाासन किया। पूज्य माता अहिल्या बाई ने भी होल्कर वं ा के राज्य को भगवान 'ि ाव' को समर्पित कर मात्र एक राधिका के रूप में 'इदम् न मम" कहकर राज्य का संचालन किया। संसार के इतिहास में ऐसे वीर–विरागी भारत में ही उत्पन्न हुए और भविष्य में भी होते रहेंगे।

वीर प्रताप और छत्रपति ि ावाजी ये दोनों ही आर्यत्व (हिन्दुत्व) के मूर्तिमान–स्वरूप तथा वैदिक (हिन्दू) संस्कृति की उज्ज्वल परम्पराओं के वाहक थे। एक बार महर्षि दयानन्द ने एक सभा में कुरान– ारीफ की बहुत आलोचना की और सिद्ध किया कि धार्मिक तथा सामाजिक अ ाांति फैलाने वाली कुरान की कुछ आयतें हैं। इस पर क्रुद्ध होकर एक मुसलमान

तहसीलदार ने खड़े होकर कहा– "स्वामी जी यह मुसलमानों का राज्य होता तो मैं आपको तोप से उड़वा देता।" ान्त और गम्भीर भाव रखते हुए महर्षि दयानन्द ने तत्काल उत्तर दिया– "तो मैं भी 2–4 राजपूत वीरों की पीठ थपथपा देता और फिर क्या परिणाम होता, यह तो आप समझ गये होंगे" महर्षि का यह करारा उत्तर सुनकर वह मुसलमान तहसीलदार झेंप कर सभा से चला गया।

मुगल जिन दिनों हिन्दू मन्दिरों को तोड़कर, धर्म–ग्रंथों को आग में झोंक रहे थे, हिन्दुओं को मुसलमान बना रहे थे, आर्य हिन्दू नारियों का ील भंग कर रहे थे, उस समय उन दोनों वीरों ने आर्य–संस्कृति के अनुसार जो ानदार उदाहरण प्रस्तुत किये, वे यूरोप या पि चमी जगत् के वीरों में कहीं नहीं पाए जाते। यह इतिहास प्रसिद्ध है कि उन्हीं दिनों चरित्र के धनी महाराणा प्रताप ने मिर्जा खानखाना की बेगम (पत्नी) को भाभी ाब्द से संबोधित कर ससम्मान उनके पति की बैरक में भिजवा दिया था। इसी प्रकार ि वाजी ने ाहजादे की सुन्दर पत्नी को अपनी मानसपुत्री मानकर तथा सिपाहियों की भूल के प्रति क्षमा माँगते हुए उस बेगम को वापस सुरक्षित–हालत में उसके पति को सुपुर्द कर दिया था। इतना ही नहीं, उस सुन्दर युवती को देखकर वीर ि वाजी ने यही कहा था – "का ा! इतनी सुन्दर मेरी माता होती तो मैं कितना सुन्दर होता।" यह था छत्रपति ि वाजी का ानदार चरित्र।

कर्नल टॉड के ाब्दों में "प्रताप ने विदे ी आक्रान्ताओं की जड़ों पर प्रहार करना प्रारम्भ किया था, इसमें उन्हें पूर्ण सफलता प्राप्त हुई"। एक इतिहासकार ने ि वाजी की प्रतिभा का मूल्यांकन करते हुए लिखा है–

"ि वाजी ने विदे ी आक्रान्ताओं को जड़–मूल से उखाड़कर अपने पूर्वजों के जीवनोद्दे य को पूरा किया।"

प्रातः स्मरणीय परम पिता परमे वर के प चात् दे ा के वीरद्वय–प्रताप और ि वाजी को हमारा ात– ात प्रणाम!

अ/13, सुदामा नगर, इन्दौर–852007

महामना मदनमोहन मालवीय ने अपनी भूमिकाओं के द्वारा गहरी छाप छोड़ी

–राममोहन पाठक

महामना मदन मोहन मालवीय को भारतरत्न देकर भारत सरकार ने खुद को सम्मानित किया है। नई पीढ़ी मालवीय जी को बनारस हिन्दू वि वविद्यालय के संस्थापक के रूप में ही जानती है, पर सच्चाई यह है कि उनकी पहचान अनेक रूपों में है, जैसे–समाज सुधारक, ि ाक्षा ाास्त्री, राजनीतिज्ञ, वक्ता, पत्रकार और वकील। मालवीय जी का जन्म इलाहाबाद में 25 दिसम्बर 1861 को हुआ था। उनके पूर्वज मध्यप्रदे ा में मालवा क्षेत्र के निवासी थे। 15वीं सदी में वे उत्तरप्रदे ा चले आए। मालवा का होने के कारण वे लोग 'मल्लई' कहलाते थे, जो बाद में 'मालवीय' हो गया। मदनमोहन मालवीय ने बीए पास करने के बाद ही पढ़ाना ाुरू कर दिया। पिता और दादा की तरह वे भी धार्मिक प्रचार करने के इच्छुक थे पर पारिवारिक स्थिति ऐसी थी कि उन्हें अध्यापन में आना पड़ा।

अपने व्यवहार और पढ़ाने के खास ढंग के कारण मालवीय जी अपने छात्रों के बीच काफी लोकप्रिय थे। ि ाक्षण के साथ–साथ वे दे ा की राजनीतिक परिस्थिति के बारे में भी सोचते थे और उसमें सक्रिय भूमिका निभाना चाहते थे। 1886 में कांग्रेस के कलकत्ता अधिवे ान में मालवीय जी अपने गुरू आदित्यराम भट्टाचार्य जी के साथ ाामिल हुए। वहाँ उन्होंने जो भाषण दिया, उससे कालाकांकर के राजा रामपाल सिंह बहुत प्रभावित हुए। वे इंग्लैण्ड से उन्हीं दिनों लौटे थे और उन्होंने 'हिन्दोस्तान' नामक एक साप्ताहिक समाचारपत्र निकाला था। वे इसे दैनिक करना चाहते थे। उन्होंने मालवीय जी से दो सौ रुपये मासिक वेतन पर इसका संपादक बनने का प्रस्ताव रखा। कुछ ार्तों के साथ मालवीय जी ने इसे स्वीकार कर लिया।

यूनिवर्सिटी का सपना

मालवीयजी के संपादकत्व में 'हिन्दुस्तान' ने बड़ी लोकप्रियता हासिल की। तत्कालीन सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक समस्याओं पर उनके निर्भीक लेख और टिप्पणियाँ बहुत चर्चित हुईं। मालवीय जी बेहद स्वाभिमानी थे और अपने सिद्धांत के साथ समझौता नहीं करते थे। एक दिन रामपाल सिंह ने ाराब पीकर उनसे बात की, जिससे मालवीय जी खिन्न हुए और साफ-साफ कह दिया कि मुझसे न ो में बात न किया करें। बाद में उन्होंने यह पद छोड़ ही दिया। उसके बाद मालवीय जी ने कई और समाचारपत्रों का संपादन किया। जब वे स्कूल में थे, तभी से एक वि वविद्यालय की स्थापना का स्वप्न देखने लगे थे। वे चाहते थे कि दे ा में एक ऐसा संस्थान हो, जिससे भारत के युवक-युवतियों को उच्च ि ाक्षा के लिए विदे ा न जाना पड़े। उन्होंने पहले इलाहाबाद में वि वविद्यालय की स्थापना का नि चय किया पर बाद में तय किया कि वे इसे का ाी में स्थापित करेंगे।

अपना सपना साकार करने के लिए मालवीय जी 1911 में दे ाव्यापी दौरे पर निकल पड़े। उन्होंने जनसाधारण से लेकर राजा-महाराजाओं और सेठ-साहूकारों तक से सहयोग माँगा और इस तरह एक करोड़ रुपये जमा किए। इसी रा ि से वसंतपंचमी, 4 फरवरी 1916 को उन्होंने बनारस हिन्दू वि वविद्यालय की स्थापना की। भिक्षाटन कर इतने बड़े स्वप्न को मूर्त रूप देने के कारण उन्हें किंग ऑफ बेगर्स (भिखारियों का राजा) कहा जाता था। यहाँ तक कि भीख माँगकर यूनिवर्सिटी बनाने के संकल्प के प्रति व्यंग्य स्वरूप हैदराबाद के निजाम से मिली जूती की नीलामी से प्राप्त धन भी उन्होंने वि वविद्यालय की स्थापना में लगा दिया। इससे निजाम को करारा जवाब तो मिला ही, मालवीय जी का उद्दे य भी पूरा हो गया। लगभग तीन द ाक तक कुलपति के रूप में उन्होंने वि वविद्यालय का

मार्गद र्न किया। विचार और व्यवहार में धार्मिक होने के नाते मालवीय जी बचपन से ही बालकों को धार्मिक ि ाक्षा देना आव यक समझते थे। 1920 में इसी उद्दे य से उन्होंने साप्ताहिक पत्र 'सनातन धर्म' निकाला।

मालवीय जी कानून के भी अच्छे जानकार थे। राजा रामपाल सिंह ने ही उन्हें कानून का अध्ययन करने की सलाह दी थी। इलाहाबाद में 'इंडियन ओपिनियन' का सह संपादक रहते हुए वे समय निकाल कर कानून का अध्ययन करते थे। 1899 में उन्होंने वकालत की परीक्षा पास की और हाईकोर्ट में प्रैक्टिस करने लगे। वे किसी भी हाल में झूठा मुकद्दमा नहीं लेते थे। बाद में सामाजिक कार्यों में व्यस्तता के चलते वकालत का पे ाा उन्होंने छोड़ दिया। पर लगभग 20 वर्षों के बाद गोरखपुर के ऐतिहासिक चौरा-चौरी कांड में जब 170 लोगों को फाँसी की सजा हुई तब इलाहाबाद हाइकोर्ट में मालवीय जी ने अद्भुत बहस की और इनमें से डेढ़ सौ को फाँसी से बचा लिया इस मुकद्दमे में प्रभाव ाली बहस के लिए चीफ जस्टिस ने उन्हें अदालत में ही बधाई दी थी।

गंगा के पक्ष में

गंगोत्री से निकली गंगा की धारा को रोक दिए जाने के विरुद्ध महासभा की ओर से उन्होंने व्यापक सत्याग्रह अभियान चलाया। आखिरकार अंग्रेज सरकार समझौता करने को विव ा हुई और उसने उत्तराखंड में गंगा की धारा पर कोई भी बाँध या फैक्टरी न बनाने का फैसला किया। मालवीय को 'महामना' की उपाधि किसने दी, इस संबंध में प्रामाणिक तथ्य उपलब्ध नहीं है। संभवतः महात्मा गाँधी ने 1916 के कलकत्ता कांग्रेस अधिवे ान के दौरान उन्हें 'महामना' अ मैन ऑफ लार्ज हार्ट' कहा था। जो भी हो, महामना करोड़ों भारतवासियों के दिल में हमे ाा बसे रहेंगे।

लेखक-हिंदी पत्रकारिता संस्थान,
का ाी विद्यापीठ के पूर्व निदे ाक

"डॉ. अम्बेडकर एक सच्चे राष्ट्रभक्त व मानववादी थे"

-खु ाहाल चन्द्र आर्य

इससे पहले कि मैं डॉ. अम्बेडकर की सच्ची दे ाभक्ति व मानवीय गुणों का वि लेषण करूँ, उनकी जीवनी पर कुछ प्रका ा डालना उचित समझता हूँ। अम्बेडकर का जन्म मध्यप्रदे ा के 'महू नगर' में 14 अप्रैल 1859 ई. को एक 'महार' परिवार में हुआ था। ये अपने पिता रामजी सकपाल की चौदहवीं सन्तान थे। वे अपनी माँ भीमाबाई के दुलार प्यार में मात्र पाँच वर्ष तक ही खेल पाये। फिर उन्हें मिला चाची मीराबाई का उदार प्यार। अम्बेडकर की चाची उसे घर में "भीमा" नाम से पुकारा करती थी। कालान्तर में यही बालक "भीमराव रामजी अम्बेडकर" के नाम से सुप्रसिद्ध हुआ। उस वक्त भारत गोरी सरकार की गिरफ्त में था और भारत पर उसका एकछत्र राज्य था। अंग्रेज हिन्दुओं में छुआछूत के बीज डालकर 'फूट डालो और ाासन करो' की फसल काट रहे थे और हिन्दू फँसे थे ऊँच-नीच, छोटा-बड़ा, ब्राह्मण, ठाकुर, कायस्थ, चमार, कोरी अर्थात् इन भेद-भावों की तुच्छ व निचली भावनाओं के दलदल में। भीमराव संस्कृत की ि ाक्षा ग्रहण करना चाहते थे, परन्तु संस्कृत के ि ाक्षक ने उन्हें ि ाष्य रूप में स्वीकार नहीं किया, क्योंकि वह 'अछूत' थे। विव ा होकर उन्हें फारसी भाषा का अध्ययन करना पड़ा। अध्यापक उनकी अभ्यास-पुस्तिका तथा कलम तक भी नहीं छूते थे। उन्हें पूरे दिन स्कूल में प्यासा रहना पड़ता था, क्योंकि अछूत होने के कारण वह वहाँ पानी भी नहीं पी सकते थे। इतनी तकलीफें सहने के बाद भी उनका हृदय मानवतावादी व उदार था। उनके जीवन के कार्यों को देखकर हम उनको सिर्फ अछूतों के मसीहा ही न कहकर सच्चा दे ाभक्त, अति सूझबूझ व विलक्षण बुद्धि वाला महान दूरद ाी महामानव ही कहेंगे। उनको सिर्फ समाज की ही धरोहर कहना उनके सर्वांगीण व्यक्तित्व के प्रति अन्याय होगा। उनका द ान सामाजिक चिन्तन पर आधारित था। वे सामाजिक समानता, मौलिक अधिकार, मानवीय न्याय, सच्चे समाजवाद तथा दे ाभक्ति के लिए एकता बनाये रखने के पक्षधर थे। इस वि वचहेते

महामानव का पार्थिव ारीर 6 दिसंबर 1956 ई. को पंचभूतों में जरूर मिल गया, परंतु उनका य ारूपी ारीर सदा-सदा के लिए भारतीयों का मार्गद र्न करता रहेगा। इनकी दे ाभक्ति व सच्ची मानवता निम्नलिखित प्रसंगों से स्पष्ट विदित होती है-

1. आदरणीय 'बलराज मधोक' के "डॉ. अम्बेडकर के क मीर और आरक्षण संबंधी-विचार" ीर्षक लेख, के अनुसार जब नेहरु जी से ेख-अब्दुल्ला संविधान में 370 धारा जोड़ने का आग्रह कर रहे थे, तब नेहरु जी ने ेख अब्दुल्ला को डॉ. अम्बेडकर के पास भेजा। उस समय अम्बेडकर विधि मंत्री के साथ-साथ संविधान की ड्राफ्टिंग समिति के अध्यक्ष भी थे। अब्दुल्ला अम्बेडकर से मिले और उनको जम्मू-क मीर को वि ोष दर्जा देने का आग्रह करते हुए कहा कि सुरक्षा, विदे ा-नीति, यातायात और मुद्रा के अतिरिक्त केंद्र सरकार का जम्मू-क मीर में कोई अधिकार नहीं होना चाहिए। अब्दुल्ला ने क मीर के लिए अलग नागरिकता और रियासत में किसी बाहर के व्यक्ति को जमीन खरीदने, नौकरी करने आदि पर रोक से संबंधित कानून बनाने की वकालत भी की। इस बात पर अम्बेडकर ने ेख से कहा कि आप चाहते हैं कि भारत आपकी रियासत की सुरक्षा करे, वहाँ के लोगों को सस्ता अनाज दे, सड़क बनाये और विकास के लिये धन लगाये, परंतु जम्मू-क मीर पर उसका कोई अधिकार और नियंत्रण न हो। उन्होंने ऐसा करने में अपनी असहमति प्रकट करते हुए ेख से कहा कि मैं भारत का विधि-मंत्री हूँ, मैं आपको संतुष्ट करने के लिए भारत के हितों की बलि नहीं चढ़ा सकता। डॉ. अम्बेडकर से निरा ा होकर फिर वे पं. नेहरु के पास आये। पं. नेहरु में इतनी हिम्मत नहीं थी कि वे डॉ. अम्बेडकर पर ऐसा काम करने लिए (जो स्पष्ट रूप से राष्ट्रहित के प्रतिकूल था) दबाव डालते, इसलिए उन्होंने यह काम गोपाल स्वामी आयंगर को सौंपा। श्री आयंगर ने संविधान में अब्दुल्ला के आ ाय की धारा 370 को जोड़ने का प्रस्ताव संविधान-सभा में रखा। अधिकां ा सदस्यों ने इसका विरोध किया, तब श्री आयंगर ने सरकार की ओर से संविधान-सभा को आ वासन दिया कि यह धारा अस्थायी है और सरकार को वि वास है कि इसे ीघ्र ही खत्म करके

जम्मू-क मीर राज्य को भी भारत के अन्य राज्यों के स्तर पर लाया जा सकेगा। इसलिए यह धारा भारत के संविधान के उस अनुच्छेद के अंतर्गत रखी गई, जिसका ीर्षक है "अस्थायी और बदली जाने वाली धाराएँ।" इससे डॉ. अम्बेडकर की दे ाभक्ति व साहस का परिचय मिलता है और नेहरु जी की तुष्टीकरण की कमजोर नीति का आभास होता है, जिसका दुष्परिणाम आज की भयावह स्थिति है।

2. एक दूसरे प्रसंग पर मधोक जी की अम्बेडकर से हरिजनो के लिये विधान सभाओं और सरकारी नौकरियों में आरक्षण की बात हुई। मधोक जी को यह सुनकर आ चर्य हुआ कि वे आरक्षण के पक्ष में नहीं थे। उनका कहना था कि जब तक आरक्षण रहेगा, हरिजन अपने पाँव पर न खड़े होंगे और न उनमें खड़ा होने का आत्मवि वास पैदा होगा। वे हरिजनों को सदा के लिए बैसाखी लेकर चलने वाला अपंग नहीं बनाना चाहते थे। इसलिये वे चाहते थे कि आरक्षण दस वर्षों के बाद खत्म कर दिये जाएँ। उनके द्वारा स्थापित "रिपब्लिकन पार्टी" के घोषणा-पत्र में भी यह बात स्पष्ट रूप में लिखी गई थी। इस प्रकार आरक्षण के संबंध में उनका दष्टिकोण तथाकथित राष्ट्रवादियों और हरिजनों के हितों के ठेकेदारों की अपेक्षा कहीं अधिक स्पष्ट, तर्कसंगत और राष्ट्रवादी था। वे हरिजनों के सबसे बड़े हितचिंतक थे, इसलिए उनके इन विचारों का वि ोष महत्व है। इससे डॉ. अम्बेडकर के विचार कितने सुलझे हुए थे और उनके प्रत्येक विचार में दे ा-हित की प्रधानता रहती थी-इस तथ्य का दिग्द र्न होता है।

3. मधोक जी आगे लिखते हैं कि पाकिस्तान और मुसलमानों के विषय में चर्चा करने पर उन्होंने विभाजन के समय लिखी अपनी पुस्तक "थॉट्स ऑन पाकिस्तान" में दिया गया अपना मत दोहराया। उनके इतिहास, मुस्लिम कानून और परंपरा के अध्ययन के आधार पर अम्बेडकर का स्पष्ट मत था कि पाकिस्तान में हिन्दू रह नहीं सकेंगे और हिन्दुस्तान में रह गये मुसलमान अपनी मानसिकता कभी नहीं बदलेंगे। उनका यह स्पष्ट मत था कि इस्लाम के मूल सिद्धान्त मुसलमानों और गैर-मुसलमानों के साथ बराबरी के आधार पर ांतिपूर्ण सहअस्तित्व के रास्ते में सबसे बड़ी रुकावट हैं। उन्होंने अपने

इस मत को दोहराया कि यदि उनके सुझाव के अनुसार विभाजन के साथ ही हिन्दुस्तान में रह गये मुसलमानों और पाकिस्तान में रह गये हिन्दुओं की अदला-बदली की बात मान ली गई होती और उसे योजनाबद्ध ढंग से कार्यान्वित किया जाता तो खण्डित हिन्दुस्तान की मुस्लिम-समस्या खत्म हो जाती और यह विभाजन की एक उपलब्धि होती। वे उस भूल के लिए मूलतः गाँधी जी और पं. नेहरु को दोषी मानते थे। पं. नेहरु के विषय में उनकी धारणा अच्छी नहीं थी। उनका कहना था कि कांग्रेस में कई अच्छे लोग हैं, परंतु पं. नेहरु के कारण वे दब गये हैं और अपनी बात कह नहीं पाते। उनके अनुसार पं. नेहरु को भारत के हितों की अपेक्षा अपनी अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति और प्रतिष्ठा की चिन्ता अधिक रहती है, इसलिए बहुत बार जाने-अनजाने में वे ऐसे फैसले और नीतियाँ बना लेते हैं, जिनसे राष्ट्र की उपेक्षा होती है। डॉ. अम्बेडकर को निकट से देखने, सुनने और उनके चिन्तन और व्यवहार से मधोक जी को लगा कि वैदिक वर्ण-व्यवस्था के अनुसार वे सच्चे ब्राह्मण हैं। उनकी बुद्धि प्रखर थी और वे हर विषय और समस्या की गहराई तक जाते थे। जो बात उन्हें ठीक नहीं लगती थी, उसे कहने में हिचकिचाते नहीं थे। उनमें आत्मवि वास की दढ़ता थी और उसके अनुसार काम करने की हिम्मत थी। वे सच्चे राष्ट्रवादी थे। उनके मन में पिछड़े वर्ग और हरिजनों के लिये तड़प थी, क्योंकि वे मुक्तभोगी थे, परंतु उनके मन में अन्य लोगों के प्रति भी कटुता नहीं थी। वे पिछड़े वर्ग के हितों को राष्ट्रहित से अधिक महत्व नहीं देते थे। यह थी उनकी राष्ट्रीयता व दे ाभक्ति।

मधोक जी के इस लेख से गाँधी-नेहरु की अपने स्वार्थ के लिए तुष्टीकरण की नीति और डॉ. अम्बेडकर की राष्ट्रभक्ति तथा सच्ची मानवता के उज्ज्वल चरित्र का परिचय मिलता है। यदि दे ा के विभाजन के समय डॉ. अम्बेडकर की बात मान ली गई होती, तो भारत के सामने आज जो समस्याएँ मुँह खोले खड़ी हैं, वे नहीं रहतीं। दे ा निरंतर उन्नति और समद्धि के पथ पर अग्रसर होता हुआ आज उच्चतम विकसित दे ाों की पंक्ति में खड़ा हुआ मिलता।

180, महात्मा गाँधी रोड (दो तल्ला),
कोलकाता-700007

मुस्लिम और ईसाइयों की बढ़ती जनसंख्या चिन्तनीय

–जितेन्द्र बजाज

अगर भारत की एकता, अखंडता बनाए रखनी है तो यह जरूरी है कि यहाँ विभिन्न समुदायों की संख्या के अनुपात में अधिक विषम वद्धि न हो। जहाँ–जहाँ दुनियाँ में यह अनुपात बदलता है, वहाँ–वहाँ विभाजन की प्रक्रिया ुरू हो जाती है। 1947 में भारत विभाजन से पूर्व इसी प्रकार की स्थितियाँ बन गई थीं। कुछ क्षेत्रों में मुस्लिम जनसंख्या का अनुपात ज्यादा होने के कारण वहाँ पथक दे ा की माँग उठी। यह खतरा अब फिर सिर उठाने लगा है। भारत के कई क्षेत्रों में यह खतरा मंडरा रहा है, क्योंकि इन क्षेत्रों में भारतीय मूल के पंथावलम्बियों का अनुपात घट रहा है।

भारत में 1881 से जब से जनगणना का कार्य ुरू हुआ, तभी से पंथानुसार आँकड़े इकट्ठे किये जाते रहे हैं। सामाजिक, आर्थिक विषयों का भी पंथानुसार आकलन किया जाता था। स्वतंत्रता से पूर्व पंथानुसार ि ाक्षा, लिंगानुपात, आर्थिक व्यवसाय आदि का वि लेषण प्रस्तुत किया जाता था, किन्तु स्वतंत्रता के बाद यह बंद कर दिया गया। इस कारण वस्तुस्थिति का पता नहीं चल पाता । आँकड़ा मिल जाता था, लेकिन सामाजिक–आर्थिक स्तर पर क्या हो रहा है, यह लोगों के सामने नहीं आता था। हालांकि जनगणना के दौरान ये आँकड़े इकट्ठे किए जाते थे। अब पहली बार जनगणना के आँकड़ों का विस्तत वि लेषण कर व्यवसाय, ि ाक्षा, लिंग के अनुरूप वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है। ये आँकड़े सामने आने के बाद अनेक गुत्थियों को सुलझाने और समझने में मदद मिल सकेगी।

जनसंख्या परिवर्तन में आर्थिक–सामाजिक कारणों की भूमिका

पहले लोगों का अनुमान था कि हिन्दू, मुस्लिम और ईसाइयों की आबादी बढ़ने या घटने में आर्थिक–सामाजिक कारण महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। लेकिन 2001 जनगणना के आँकड़ों के विस्तत वि लेषण से स्पष्ट हो गया है कि ये दोनों कारण बहुत अधिक भूमिका नहीं निभाते। माना जाता था कि मुसलमानों की जनसंख्या वद्धि का कारण उनका आर्थिक पिछड़ापन और अि ाक्षा है। आँकड़े देखें तो स्पष्ट है कि हिन्दुओं और मुसलमानों की साक्षरता में बहुत ज्यादा अंतर नहीं दिखाई देता। हिन्दुओं की साक्षरता दर 55 प्रति ात है तो मुसलमानों की 47 प्रति ात। इसी प्रकार 45 प्रति ात हिन्दू महिलाएँ साक्षर हैं तो मुस्लिम महिलाओं की साक्षरता दर 40 प्रति ात है। यह कहना ठीक नहीं होगा कि मुसलमानों में जन्म दर बढ़ने का कारण उनमें अि ाक्षा है।

2001 की जनगणना के आँकड़ों का संकेत : खतरे की घंटी

1901 से 2001 तक 100 साल में हुई जनगणनाओं के आँकड़े देखें तो चिंताजनक तथ्य सामने आता है। 1947 से पूर्व के भारत वर्ष

(भारत, पाकिस्तान, बंग्लादे ा) में भारतीय मूल के पंथावलम्बियों के अनुपात में तेजी से कमी आयी है। 1881 में यहाँ की जनसंख्या में भारतीय मूल के पंथावलम्बियों का अनुपात 79.32 प्रति ात था, 1991 में यह घटकर 68.03 प्रति ात रह गया। इसकी तुलना में मुसलमानों का अनुपात प्रायः 10 अंकों तक बढ़ा है। 1881 में उनकी जनसंख्या का अनुपात 19.97 प्रति ात था जो 1991 में 29. 94 प्रति ात हो गया। ईसाइयों का अनुपात 1 प्रति ात से कुछ अधिक बढ़ा है। 1881 में वे जनसंख्या का 0.79 प्रति ात थे, 1991 में 2 प्रति ात से अधिक हो गए। अगर सिर्फ भारत की स्थिति पर नजर डालें तो हिन्दुओं की घटती जनसंख्या स्पष्ट रूप से खतरे का संकेत देती है। स्वतंत्रता के बाद 1951 में हुई जनगणना में हिन्दुओं का अनुपात 87.24 प्रति ात था जो 2001 तक यानी पाँच द ाकों में घटकर 84.21 प्रति ात रह गया अर्थात् 3 प्रति ात हिन्दू घटे जब कि मुसलमानों का अनुपात 3 प्रति ात बढ़ा। 1951 में भारत में मुसलमानों का अनुपात 10.43 प्रति ात था, जो 2001 में बढ़कर 13.43 प्रति ात हो गया। अर्थात् 3 प्रति ात की वद्धि। इसी प्रकार ईसाइयों के अनुपात में वद्धि दर्ज की गई। 1951 में ईसाई जनसंख्या का अनुपात 2.33 प्रति ात था जो 2001 में 2. 35 प्रति ात हो गया। भारत-विभाजन के बाद इतना बड़ा अंतर चिंता की बात है।

राज्यों में जनसंख्यिक अनुपात

भारत के कुछ ऐसे राज्य हैं जहाँ जनसांख्यिक परिवर्तन भयावह स्थिति द ार्ाता है। इनमें पूर्वोत्तर भारत के राज्यों, बिहार, पं. बंगाल, केरल, हरियाणा आदि में जनसंख्या के आँकड़े चेताने वाले हैं। असम में पिछले तीन द ाकों में मुस्लिम जनसंख्या का अनुपात लगभग 6 प्रति ात बढ़ा। 1971 में यहाँ मुसलमानों का अनुपात 24. 56 था, जो 2001 में बढ़कर 30.92 हो गया। यह उल्लेखनीय वद्धि चिंता का कारण होनी चाहिए। विभाजन के बाद यह बहुत बड़ा परिवर्तन है।

पं. बंगाल से भी ऐसे ही संकेत मिले हैं। स्वतंत्रता के बाद 1951 में हुई जनगणना के अनुसार यहाँ भारतीय मूल के पंथावलम्बियों का अनुपात 79.85 प्रति ात था, जो 2001 में 5 प्रति ात घटकर 74.11 प्रति ात रह गया। यहाँ मुसलमानों का अनुपात तेजी से बढ़ा है। 1951 में उनका अनुपात 19.46 था जो 2001 में बढ़कर 25. 25 प्रति ात हो गया। यहाँ मुसलमानों का अनुपात 6 प्रति ात बढ़ा। 1981 के द ाक में यहाँ मुसलमानों का अनुपात तेजी से बढ़ना ाुरू हुआ।

पूर्वोत्तर भारत में राज्यों की स्थिति बहुत चिंताजनक है। वहाँ भारतीय मूल के पंथावलम्बियों का अनुपात तेजी से घटा है। अरुणाचल प्रदे ा एक ऐसा राज्य था, जहाँ 1961 तक लगभग सभी

भारतीय मूल के पंथावलम्बी थे। वह नेफा का हिस्सा था। लेकिन 1961 के बाद जब वहाँ नागरिक प्र ाासन आया तो ईसाइयों का अनुपात तेजी से बढ़ने लगा। 1961 में वहाँ ईसाइयों का अनुपात मात्र 0.51 प्रति ात था। यानी एक प्रति ात अनुपात भी नहीं था, लेकिन पाँच द ाक में यह आँकड़ा 18.72 प्रति ात तक पहुँच गया। 1961 में वहाँ भारतीय मूल के पंथावलम्बियों का अनुपात 99.19 प्रति ात था। यह अनुपात तेजी से 20 प्रति ात घटा और अब वहाँ 79.40 प्रति ात हिन्दू ही रह गए हैं। अरुणाचल प्रदे ा के कुछ जिलों में तो यह अनुपात भयावह संकेत देता है। वहाँ के लोअर सुबानसीरी में 1991 में जहाँ ईसाई अनुपात 22 प्रति ात था, दस साल में वह बढ़कर 27.5 प्रति ात हो गया। और इसके एक भाग पापमपोर में यह आँकड़ा 30 प्रति ात तक पहुँच गया। तिरप में इस एक द ाक में ईसाइयों का अनुपात 18 प्रति ात से बढ़कर 50 प्रति ात हो गया। इतना बड़ा जनसांख्यिक परिवर्तन दे ा के किसी क्षेत्र में नहीं देखा गया। इसी प्रकार चांगलांग में 1991 में जहाँ 11 प्रति ात ईसाई अनुपात था, 2001 में बढ़कर वह 18 प्रति ात हो गया।

त्रिपुरा एक ऐसा राज्य है जहाँ आजादी के बाद से भारतीय मूल के पंथावलम्बिों का अनुपात बढ़ रहा था लेकिन गत 2 द ाकों में यह अनुपात तेजी से घटने लगा है। 1961 में वहाँ भारतीय मूल के पंथावलम्बियों का अनुपात 78.98 था। एक द ाक बाद यह बढ़कर 92.31 तक पहुँचा, उसके बाद अनुपात घटना ाुरू हो गया। पिछले दो द ाकों में घटते-घटते अब यह 88.84 तक पहुँच गया है।

सिक्किम बौद्धबहुल राज्य है। कई द ाकों से यहाँ ईसाई मि ानरियों द्वारा मतान्तरण के प्रयास चल रहे थे। पिछले एक द ाक में उनके प्रयासों के परिणाम सामने आए। इस द ाक में ईसाइयों का अनुपात 3 प्रति ात बढ़ा।

मेघालय में तेजी से जनसांख्यिक परिवर्तन देखा गया। आजादी के बाद हुई जनगणनाओं के आँकड़ें द ार्ाते हैं कि वहाँ हर द ाक में ईसाइयों का अनुपात तेजी से बढ़ा है। 1941 में वहाँ ईसाइयों का अनुपात 0.19 था। 2001 में यह बढ़कर 70.25 हो गया।

नागालैण्ड में सौ साल पहले तक ईसाइयों का अनुपात 0.59 था, लेकिन वहाँ मतान्तरण का चक्र इतनी तेजी से चला कि अब वहाँ लगभग 90 प्रति ात जनसंख्या ईसाइयों की है। उनका अनुपात 89. 97 प्रति ात है।

मिजोरम के आँकड़े देखें तो चौंकाने वाली स्थिति दिखाई देती है, जो मि ानरियों द्वारा मतान्तरण के कुचक्र को सामने लाती है। 1941 में वहाँ ईसाइयों का अनुपात ाून्य था, 2001 में यह ाून्य से बढ़कर 86.97 प्रति ात तक पहुँच गया और भारतीय मूल के पंथावलम्बियों का अनुपात 99.93 प्रति ात से घटकर 11.81

प्रति ात रह गया।

उत्तर भारत के राज्यों से प्राप्त आँकड़ों पर नजर डालें तो हरियाणा में चिंताजनक स्थिति नजर आती है। 1991 के बाद वहाँ मुसलमानों की जनसंख्या का अनुपात तेजी से बढ़ा है। 1961 में वहाँ मुसलमानों का अनुपात 3.83 प्रति ात था। जो 2001 में 5. 78 प्रति ात हो गया। हिमाचलप्रदे ा के कुछ इलाकों में धीरे-धीरे मुस्लिम और ईसाई समुदाय के लोगों का अनुपात बढ़ रहा है। इस संदर्भ में दे ा की राजधानी दिल्ली की स्थिति भी चिंताजनक है। दिल्ली में मुसलमानों की जनसंख्या का अनुपात निरंतर बढ़ रहा है। 1981 के बाद से इसका अनुपात हर द ाक में 2 प्रति ात बढ़ा है। 1951 में दिल्ली में यह अनुपात मात्र 5.71 प्रति ात था जो 1981 में बढ़कर 7.75 हुआ, 1991 में आँकड़ा 9.44 तक पहुँचा और 2001 में मुस्लिम जनसंख्या का अनुपात 11.72 प्रति ात दर्ज किया गया। दिल्ली में भारतीय मूल के पंथावलम्बी लगातार घट रहे हैं। 1951 में यहाँ 93.22 प्रति ात अनुपात भारतीय मूल के पंथावलम्बियों का था, जो निरन्तर घटते-घटते 87.34 रह गया अर्थात् पिछले 50 साल में दिल्ली में 6 प्रति ात भारतीय मूल के पंथावलम्बी घटे। इसका कारण यह है कि दिल्ली में अल्पसंख्यकों को वि ोष संरक्षण मिलता रहा है।

केरल में उल्लेखनीय जनसांख्यिक परिवर्तन देखने में आया। 1961 तक यहाँ ईसाइयों का अनुपात बढ़ रहा था। उसके बाद यह घटना ारू हुआ। 1961 में यह अनुपात 21.22 प्रति ात था जो 1981 में घटकर 20.56 प्रति ात हो गया और 2001 में यह आँकड़ा 19. 02 प्रति ात तक पहुँच गया। यही वह दौर था जब केरल में मुसलमानों की जनसंख्या का अनुपात बढ़ना ारू हुआ। 1961 में वहाँ मुसलमानों का अनुपात 17.91 था जो हर द ाक में 2 प्रति ात बढ़ते-बढ़ते अब 24.70 तक पहुँच गया है। जबकि भारतीय मूल के पंथावलम्बियों का अनुपात लगभग 4 प्रति ात घटा है। पिछले सौ साल के आँकड़ों पर नजर डालें तो साफ दिखाई देता है कि वहाँ हर द ाक में हिन्दुओं का अनुपात एक से डेढ़ प्रति ात घटा है। भारत के सीमावर्ती क्षेत्रों में मुस्लिम जनसंख्या के साथ-साथ मस्जिदों और मदरसों की तेजी से बढ़ती संख्या देख माथे पर चिंता की लकीरें खिंच जानी चाहिए, लेकिन यहाँ किसी को कोई चिंता है, ऐसा लगता नहीं।

चिंता क्यों?

अगर राजनीतिक और भौगोलिक दष्टि से भारत का एक ईकाई बने रहना महत्त्वपूर्ण नहीं है तो पंथानुसार जनसंख्या के अनुपात में यह अंतर भी महत्त्वपूर्ण नहीं है। अगर भारत की एकता महत्वपूर्ण है तो यह अनुपात भी महत्वपूर्ण है। जिन दे ाों को अपनी आंतरिक एकता महत्त्वपूर्ण लगती है, उनके लिए यह अनुपात चिंता की बात होती है। अगर भारत की एकता, अखंडता बनाए रखनी है तो यह जरूरी है कि यहाँ विभिन्न समुदायों के

अनुपात में बहुत अधिक विषम वद्धि न हो। जहाँ-जहाँ दुनिया में यह अनुपात बदलता है, वहाँ-वहाँ विभाजन की प्रक्रिया ुरू हो जाती है। 1947 में भारत-विभाजन से पूर्व इसी प्रकार की स्थितियाँ बन गई थीं। कुछ क्षेत्रों में मुस्लिम जनसंख्या का अनुपात ज्यादा होने के कारण वहाँ पथक दे ा की माँग उठी। यह खतरा अब फिर सर उठाने लगा है। भारत के कई क्षेत्रों में यह खतरा मंडरा रहा है क्योंकि इन क्षेत्रों में भारतीय मूल के पंथावलम्बियों का अनुपात घट रहा है। पिछले पचास वर्षों में जनगणना के आँकड़ें देखें तो स्पष्ट हो जाता है कि 1981 से 1991 और 1991 से 2001 में जनसांख्यिक अनुपात भारत के विभिन्न क्षेत्रों में बड़ी तेजी से बदला है। इन दो द ाकों में मुसलमानों का अनुपात बहुत तेजी से बढ़ा है। 2001 की जनगणना में मुस्लिम जनसंख्या की वद्धि दर 36 प्रति ात दर्ज की गई, हिन्दुओं की जनसंख्या वद्धि दर में कमी आई है और यह 20.3 प्रति ात है।

जनसांख्यिक अनुपात में अंतर का कारण

पिछले दो द ाकों में भारत में ही नहीं, वै ि वक परिद य में जनसांख्यिक दष्टि से उल्लेखनीय परिवर्तन दर्ज किए गए। इसका प्रभाव भारत पर भी पड़ा। इन 20 वर्षों में वि वभर में इस्लाम का तेजी से प्रसार हुआ। भारत में भी इसका प्रचार-प्रसार हुआ और यही वह दौर रहा, जब इसके लिए बाहर से पैसा आना ुरू हो गया और लगातार आ रहा है। इस कारण भी इस्लाम के मतानुयायी बढ़ रहे हैं और उनमें अधिक कट्टरता आ रही है। इस संदर्भ में एक उदाहरण उल्लेखनीय है मैं हाल ही में पि चमी उत्तरप्रदे ा के एक गाँव में गया था। वहाँ पारम्परिक पंचायतों का बहुत प्रभाव है। वहाँ के सरपंच से मैंने पूछा कि यहाँ पंचायतों की चलती है और मुसलमान उसी का हिस्सा हैं, लेकिन अगर मुसलमानों के सामने ऐसी स्थिति आ जाए कि उन्हें पंचायत के फैसले या इस्लाम में से किसी एक का चुनाव करना पड़े तो वे क्या करेंगे? इस प्र न के उत्तर में उन्होंने कहा कि अगर आप 10-20 साल पहले मुझसे यह प्र न पूछते तो मैं कहता पंचायत उनके लिए महत्त्वपूर्ण थी। पंचायत कहती कि इस्लाम छोड़ दो तो वे इस्लाम की बजाय पंचायत की बात मानते। लेकिन आज यह नहीं कहा जा सकता क्योंकि अब नए बच्चे और युवा पीढ़ी इस्लाम के प्रति उनसे ज्यादा कट्टर है।

पहले इस्लाम का प्रचार-प्रसार आंतरिक स्रोतों से ही होता था लेकिन अब इसके लिए बाहर से खूब पैसा आता है। अब केरल को ही लें, 1971 के आस-पास जब से खाड़ी दे ाों के लिए रास्ता खुला, तब से वहाँ मुसलमानों की संख्या अचानक तेजी से बढ़ी है। वहाँ एक अधिकारी ने बताया कि जो लोग खाड़ी के दे ाों में काम के लिए जाना चाहते हैं, अगर वे मुसलमान हैं तो उन्हें आसानी से वहाँ का वीसा मिला जाता है। इस कारण से भी बहुत सारे लोग मुसलमान बने। वहाँ इस्लाम में मतान्तरण का दौर अभी

थमा नहीं है। इन स्थितियों से स्पष्ट हो जाता है कि इस्लाम और ईसाई मत ने जिस प्रकार अपना विस्तार किया, हिन्दू उस प्रकार नहीं कर पाए।

हिन्दुओं में उदासीनता

जब हिन्दू अपने आपको अभिव्यक्त नहीं कर पाये, तब हर दि ा में पतन होना स्वाभाविक था। 1981-1991 में जिस तेजी से भारतीय मूल के पंथावलम्बियों का अनुपात घटना ारू हुआ, उसका कारण स्पष्ट रूप से अपने प्रति उदासीनता का भाव है। यह प्रवत्ति 2001 के आँकड़ों में और भी मुखर हुई है। हिन्दुओं का अनुपात घटने की प्रक्रिया और भी तेज हो रही है। यह बड़े संकट का संकेत है।

कैसे जागे हिन्दू?

जब उनमें अपनी सभ्यता-संस्कृति के प्रति गौरव का भाव जागेगा तो वे खुद ही उठ खड़े होंगे। हममें अपनी सभ्यता के प्रति इतनी आस्था हो कि अपने बच्चों को पढ़ा सकें कि हम क्या थे और क्या हैं? हमारा अतीत कितना गौरव ाली रहा है। अभी तो हम इसी दुविधा में फँसे हुए हैं कि बच्चों को क्या पढ़ाएँ? आजादी के 50 साल बाद भी हम यह तय नहीं कर पाए कि अपने इतिहास को किस परिप्रेक्ष्य में देखना है। बच्चों को क्या बताना है कि हमारा दे ा महान था या गुलाम, पराजित। हमारा इतिहास गौरव ाली रहा है लेकिन हम उस पूरे इतिहास को ार्मनाक बनाकर प्रस्तुत करते हैं। जो दे ा यह निर्णय नहीं कर पा रहा है कि उसे क्या करना है, कहाँ पहुँचना है, वह आगे कैसे बढ़ेगा? कल तक चीन हमारे जैसा ही था, आज वह कहाँ पहुँच गया है? लेकिन हम अभी दुविधा में ही फँसे हैं। लेकिन अब हिन्दू भी धीरे-धीरे अपने आपको अभिव्यक्त करने लगे हैं। उनमें धीरे-धीरे अपने धर्म के प्रति आस्था जाग रही है।

राजनीतिक कारण

राजनीतिज्ञों द्वारा मुस्लिमों और ईसाइयों को ज्यादा प्रश्रय देने के कारण जनसांख्यिक अनुपात में यह अंतर आया-यह कहना ठीक नहीं होगा। यहाँ की जनता ने सरकारें भी बदल कर देख लीं। लेकिन इससे सार्वजनिक जीवन में ऐसा कोई क्रांतिकारी परिवर्तन देखने में नहीं आया, जिस परिवर्तन की अपेक्षा थी। वर्षों की पराजय और उपनिवे ा बने रहने के बाद स्वतंत्र होने पर राष्ट्र-निर्माण के लिए हमें जो परिश्रम करना चाहिए था, वह नहीं किया। राष्ट्र-निर्माण का भाव हमारे भीतर जागा ही नहीं। यह लगन तभी जागती है जब हमारे भीतर अपनी सभ्यता और संस्कृति के प्रति गौरव का भाव हो। हमने गौरव ाली अतीत को भूलने की कोि ा की। हमने यह भी भुला दिया कि हम एक महान सभ्यता के वाहक हैं, उसे पुनर्जीवित करना हमारा कर्त्तव्य है।

पाञ्चजन्य से साभार

BHARAT RATNA MADAN MOHAN MALAVIYA

Born in Allahabad, renowned educationist and freedom fighter Madan Mohan Malaviya is known for the espousal of Hindu nationalism.

Exceptional Journalist

Malaviya started his journalistic career as the editor of the Hindustan in 1887. He also founded in 1909 a highly influential English newspaper-The Leader-published from Allahabad. He was also the chairman of Hindustan Times from 1924 to 1946. His efforts resulted in the launch of HT's Hindi edition in 1936.

Inspiring Politician

Malaviya was catapulted to the political arena after his inspiring speech at the second Congress session in Calcutta in 1886. He went on to serve Congress for almost 50 years. In 1930, when Mahatma Gandhi launched the salt Satyagraha and the Civil Disobedience Movement, he participated in them and courted arrest.

Malaviya saw BHU as civilisational & nationalist Mission

-Ashok Malik

In some respects, the awarding of the Bharat Ratna to Madan Mohan Malaviya is an anachronism. Posthumous awards are always anachronisms and a bit of a delayed acknowledgement-too late some would say. In the case of Malaviya, who died in 1946, he has been awarded with the highest honour of the Republic of India, which was inaugurated well after he passed away.

Having said that commemorating Malaviya in some manner is well worth the effort. He was born in 1861, the same year as Rabindranath Tagore and Motilal Nehru. A scholar and lawyer, among the earliest members of the Indian National Congress, a pioneering newspaperman (he chaired the board of Hindustan Times), a social reformer who fought caste discrimination, and above all an educationist there was so much to the man. His everlasting achievement was the Banaras Hindu University (BHU).

It says something for the reductionism and lazy labelling of our times that we seek to limit our heroes. When Narendra Modi invoked Malaviya in the run up to the Lok Sabha election of 2014, there were several reasons for him to do so. He was making a political point in recalling forgotten stalwarts from outside the Nehru-Gandhi lineage. He was also urging Banaras to rediscover its heritage as a knowledge hub. Yet, there were critics who argued Malaviya was a "Brahmin leader" and Modi was using his name to win upper caste votes in Uttar Pradesh!

Similarly, a newpaper recently described Malaviya as a leader of the Hindu Mahasabha, choosing to forget he was twice president of the Congress and far from regarded as merely a sectional and parochial figure, as was being implied. That was a different epoch, when it was possible to be a member of the Mahasabha (or the Muslim League for that matter) and simultaneously be a member of the Congress. Indeed, Mahasabha and Congress meetings were sometimes held in the same city, within days of each other, to make it convenient for common members to attend.

BHU was Malaviya's greatest child. He saw it as both a nationalist and a civilisational mission, bringing modern education to one of India's iconic cities and centres of scholarship. In the years to come BHU grew into the premier educational institution in eastern Uttar Pradesh and Bihar. It remains show piece of what individual and philanthropic initiative can achieve in India, especially in the field of higher education. Like the Indian Institute of Science in Banglore, it serves as an example of how well-to-do but public spirited Indians were once happy to give money to an institutional builder of credibility and did not necessarily see higher education as almost exclusively the domain of the government, as it became after Independence.

Among those who donated to the cause of BHU, and helped Malaviya in his effort to build a university with "Hindu" in its name, was the then Nizam of Hyderabad, the richest Muslim in the country. Perhaps he was persuaded by Malaviya; perhaps he was just convinced of the cause. Today both the Nizam and Malviya-and the creation of BHU-would have got embroiled in some silly, vacuous debate about "secularism" and "communalism". One must be grateful Madan Mohan Malviya didn't live to see this age. Appositely,he would have considered himself an anachronism.

BHARAT RATNA ATAL BIHARI BAJPAYEE

-Swapan Das Gupta

Born in Gwalior, Atal Bihari Vajpayee remains one of the finest practitioners of India's enlightened pluralism and a statesman among politicians.

A Visionary

An orator par excellence and known for taking bold initiatives, notable being the attempt to bridge Indo-Pak differences, Vajpayee reached far beyond his BJP's nationalist political agenda. It was Vajpayee's sway that brought new allies to BJP, then considered a virtual untouchable in view of its rightist leanings.

Man of Action

Just after his government was a month in power, in May 1998, India conducted five underground nuclear tests in Pokhran desert. With the launching of the Delhi-Lahore bus service in 1999, Vajpayee initiated a new peace process.

Atal's prowess came from instinct

Vajpayee's oratory reflected his political personality : he was big hearted and loved life, which made him a tall leader.

In 1992, the government of P.V. Narsimha Rao honoured Atal Behari Vajpayee with a Padma Vibhushan. The announcement coincided with the tense climax of the then BJP president Murli Manohar Joshi's Ekta Yatra that involved unfuring the national tricolour in a deserted Lal Chock in Srinagar.

It was an astonishingly large hearted gesture because state honours for politicians has invariably been on partisan considerations. Within the Congress, Rao must have drawn flak for honouring the tallest leader of a party that was waging a political war against the government.

Vajpayee wasn't part of the small group that was airlifted by the administration from Udhampur to facilitate a symbolic flag-hoisting-Narendra Modi. Street marches and agitations, indispensable features of life in opposition, wasn't Atalji's style. Although compelled to make token appearances, he preferred the stage at a public meeting or the floor of Parliament to come into his own. His reputation as a public speaker far exceeded the influence of the Jana Sangh. As a 14-year old, I recall making a special effort to hear him speaking at a modest sized public meeting in Calcutta in 1970. There's nothing of the subject of his speech I remember but two facets of Vajpayee the orator were etched into my consciousness : his word play and his sparkling wit.

Atalji's oratory reflected his political personality : he was big hearted and loved life. That made him a tall leader but an awkward politician. A good politician has to be attentive to details and willing to imbibe an equal dose of drudgery and excitement. Atalji was impatient of details. He barely remembered names and was bored by endless committee meetings. He survived long stints as presidents of both the Jana Sangh and BJP courtesy individuals such as Sunder Singh Bhandari, Kushabhau Thakre and, of course, L.K. Advani. As Prime Minister he was disproportionately dependant on his principal secretary Brajesh Mishra to read his mind and do the needful.

So inadequate was his attention to detail that he often missed out on the cross-currents within the party. It is said that Nityanand Swami was appointed the first chief minister of Uttarakhand because that was the only name Atalji was familiar with-from the Jana Sangh days.

In one-on-one meetings, even those involving international leaders, Atal ji was tongue-tied, preferring to limit himself to cryptic observations that more often than not were razor sharp in precision. I once had the disconcerting experience of a 30 minute meeting where he spoke barely a few sentences, leaving me to hold forth on a range of subjects with an occasional grunt signalling approval or otherwise.

This, I was told, was northing unusual. Atalji's method of relaxation as Prime Minister was often to sit over a glass of masala Coke with close friends such as Bhairon Singh Shekhawat and Appa Ghatate. The gatherings were not marked by prolonged spells of utter silence.

However, underneath this seemingly reclusive individual lurked a very fine and astute political mind. Atalji conducted his politics on the strength of instinct. Surveys and ideological posturing left him unmoved. At an election planning meeting in 1993 for the state election in Uttar Pradesh he glanced at the Ayodhya-centric posters that had been painstakingly prepared and asked : "Where is any reference to power, water and education?" He was right. An excessively Hindutva campaign cost the BJP that election. Long years of experience had taught him that voters were unlikely to be moved by abstract ideas alone. He was always mindful of the big picture.

Atalji governed by instinct. He was an old-fashioned liberal who combined a commitment to personal freedom with a passion for economic freedom.

Date of Pubn. : 31.1.2015 Posted at - NIE - H.O. Postal Date : 2-3 Feb. 2015
RNI Reg. No. DELBIL/2007/22062 Postal Regd. No. DL(W) 10/2143/2014-2016

किं स्विदासीदधिष्ठानमारम्भणं कतमतस्वित् कथासीत्।
यतो भूमिं जनयन् वि वकर्मा विद्यामौर्णोन्माहिना वि वचक्षाः।।
।।यजु.17/18।।

ऋषि–भुवनपुत्रो वि वकर्मा, देवता–वि वकर्मा, छन्द–भुरिगार्षी पंक्तिः

अर्थ–प्र न–इस संसार का अधिष्ठान क्या है? कारण तथा उत्पादक कौन है? और कैसे है? इसके रचनाकर्ता ई वर का अधिष्ठानादि क्या है? तथा निमित्तकारण और जगत् व ई वर के साधन क्या हैं?

उत्तर–(यतः) जिसका यह जगत कर्म है उस वि वकर्मा परमात्मा ने अपनी अनन्त सामर्थ्य से इस वि व की रचना की है। वही इस जगत् का अधिष्ठान, निमित्त और साधन है। उसी ने इन सब जीवादि जगत् को रचा है तथा भूमि से लेकर स्वर्ग तक बनाकर अपनी महिमा से (और्णोत्) आच्छादित कर रखा है। परमात्मा का अधिष्ठान आदि परमात्मा ही है, अन्य कोई नहीं। सबका उत्पादन, रक्षा, धारण आदि वही करता है जो आनन्दमय है। वह ई वर कैसा है? (वि वचक्षाः) वह सारे संसार का द्रष्टा है। जो उसे छोड़कर अन्य का आश्रय लेता है, वह क्यों न दुःखी होगा?

What is the support on which this universe rests? What is its cause and who is its creator? How is it the cause of this creation? What is the efficient cause or means with which the world is made?

Almightly God is the Maker of the universe, He has made it out of His Infinite Omnipotence. He Himself is the support of this world, its efficient cause and the means of its making. He produced this creation and all living beings. He keeps the whole universe overshadowed by His Divine Providence. His Efficient cause and His instrument, is he Himself nothing else. He is "All Bliss". If someone forgets that Almighty God and takes refuge from someone else, he cannot escape from miseries.

Printed by - Friendsprintofast, New Delhi-58